ॐ

* सत्य शब्द संग्रह *

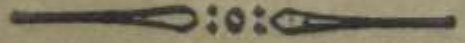

प्रकाशिका ।

श्रीमती पार्वती देवी धर्मपत्नी ला०

नूनकरणदास ।

समर्पित ।

श्री भद्रगवद्भक्ति आश्रम रामपुरा रेवाड़ी ।

८०० प्रति } सं० १९८३ { मूल्य प्रेम

भूमिका ।

प्यारे सज्जनो! मैं आप की सेवा में एक बड़े उत्तम कल्प वृक्ष के पुष्प समर्पण करता हूं जिस की गन्ध से तुम्हरा मन रुपी भ्रमर आप से आप उड़ना छोड़ कर शान्त होकर आनन्द को प्राप्त होगा। वह पुष्प सब आप्त पुरुषों के शब्द हैं जिनका भगवद्भक्तों में बड़ा ही आदर है। और जिन कल्पवृक्ष महात्माओं के इस पुस्तक में शब्द हैं उनके निम्नलिखित नाम हैं:— नरसो, नानक, नामदेव, रविदास, कबीर, सूरदास, तुलस दास मीरांबाई, चरणदास, मछन्दरनाथ, गोरखनाथ, गुलाबनाथ, भानीनाथ, सुन्दरदास, घीसादासादि। इन भजनों से आप लगों का अन्तःकरण रूपी दर्पण जब निर्मल होवेगा तब आपको बड़ा ही आनन्द विदित होगा। इन शब्दों में भक्ति ज्ञान वैराग्य और योग भरा हुवा है। जब इन में हमलोग प्रवेश करते हैं तो अपूर्व ज्ञान और प्रेम के दर्शन होते हैं। ये शब्द बड़े ही परिश्रम से प्राप्त हुए हैं। इन के गाने वालों को जो प्रेम होता है वही जानते हैं जैसे

गूंगे के गुड़ का स्वाद गूंगा ही जानता है प्रथम प्रार्थना व उपासना के शब्द हैं तदनन्तर ज्ञान और भक्ति रूप शब्द हैं ये क्रमशः चित के मल विक्षेपआवरण को दूर करते हैं और सोऽहं ज्योति का प्रकाश करके श्रुति को गगन पर चढ़ा कर सच्चे स्वामी में लय कर देते हैं।

॥ओ३म् तत्सत्॥

॥ओ३म्॥

सद्गुरु का उपदेश

ओ३म् तत्सत परब्रह्मणे नमः।

समुद्र जब स्थिर रहता है तब उसे ब्रह्म कहते हैं और उसी समुद्र में जब लहर उठती है तब उसी को हम शक्ति या माया कहते हैं वही देश काल निमित्त स्वरूप है। पहले रूप में वह ईश्वर जीव और जगत् है दूसरे रूपमें वह अज्ञात और अज्ञेय है। सर्व शक्तिमत्तर्वसा

व्यापकता अनन्त दया इसी जगज्जननी जगदम्बा प्रेम रूपिणी भगवती के गुण हैं। प्रत्येक व्यक्ति के पीछे अनन्त शक्ति विद्यमान है। एक कणविन्दु कृष्ण, बुद्ध क्रीष्ठ, आदि और जगत् का विस्तार एक विन्दु को प्रकाशित करता है। एक आत्मा ब्रह्म भिन्न २ सर्व उपाधियों में प्रकाशित होता है। बड़प्पन को हींग दलबन्दी ईर्ष्यादि सदा के लिये छोड दो पृथिवी की भांति सहिष्णु हो लड़कपन की चंचलता और युवा पन की गम्भीरता दे नों मिलाकर सब के साथ प्रेम से रहो। आत्मा के स्वरूप का व्यक्त और कभी अव्यक्त भाव होता है। आत्मा मानों बादलों से ढके हुए सूर्य की न्याईं है। हृदय को समुद्र के समान महान बना डालो क्षुद्र भावों को पार कर जावो अमंगल के आने पर भी आनन्द में उन्मत हो जाओ। संसार को एक चित्र की भांति देखो जगत् में कोई तुमको विचलित न कर सकेगा। अहंता को दूर कर दृढ़तासे खड़े हो जाओ काम कांचन मान यश को छोड कर ईश्वर को दृढ़ता से पकड़ो। विधि निषेध के घेरे में पड़े रहने से आत्मा का प्रसार नहीं होता। जो जितनी ही आत्मानुभूति का प्रकाश कर सकता है उसके

सतने ही विधिनिषेध कम हो जाते हैं। दुसरों की सेवाशुभ कर्म है इसी के प्रभाव से चित्त शुद्ध होता है इसी के प्रभाव से सब के भीतर बैठे हुए अन्तर्यामी भगवान् प्रकाशित होते हैं। आदेश के अनुसार संगठन करने का उद्योग करना धर्म का यही लक्ष्य है यही उद्देश्य है। आदर्श धार्मिक क्षमा धृति शौच शान्ति उपासना और ध्यान में परायण आदर्श का अवलम्बन विस्तार ही जीवन और संकीर्णता ही मृत्यु है। जहां प्रेम वहीं विस्तार जहां स्वार्थता वही संकोच। अतएव प्रेम ही जीवन का एक आधार है अवश्य अहेतुक प्रेम करना चाहिये वही एक मात्र जीवन गति का नियमन करने वाला है जिस कर्म से जीवों के मन में धीरे२ ब्रह्मभाव के उदय होने में सहायता पहुंचे वही कर्म उत्तम है यदि किसी को अधिक सुभीता देना हो तो बलवान की अपेक्षा दुर्बल को अधिक सुभीता दो सदा दाता बनो अपना सर्वस्व दे डालो पर बदले में कुछ न चाहो। दूसरों से प्रेम करो सहायता करो सेवा करो तुम से जोकुछ बने दूसरों के लिये करो पर सावधान पलटे में कुछ न चाहो। व्यक्तिगत, देशगत, कालगत कर्माकर्म का साधन करो।

"परोपकाराय सतांहि जीवनम्"

श्री सच्चिदानन्देश्वराय नमः

ओ३म् श्री गुरू चरण कमलेभ्यो नमः

आलस्यं मृत्युरित्याहुर्यत्नं जीवनमित्युत

विपोलिकाः कणशः कणशोऽश्नं समाहृत्यश्विवरं प्रपूरयन्ति। पुत्तिका वालमीक संचयात्क्षणमपि न विरमन्ति। सूर्यादयो महता वेगेन भ्रमन्तः क्षणमपि विश्रान्ति न कांक्षन्ति। क्षणमपि स्तभिते समीरणे कथमिव व्याकुली भवन्ति जीवाः।

हे सच्चिदानन्द अनन्त ज्ञानस्वरूप नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव सर्व शक्तिमान सर्व हृदयान्तर्गत सर्व व्यापक प्रभु यदि मैं तुम को यहां मनुष्य शरीर में रहते हुये भी अपने आत्मा में साक्षात नहीं करपाता तो और कहां पा सकूंगा अय मेरे प्यारे परमात्मा मेरे हृदय और नेत्रों में प्रकट होकर साक्षात दर्शन दिखाओगे तो इस जीव का कल्याण होगा। ओ३म् परमात्मा यह न वह वरंच सारे पदार्थों में है सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड उसके जीवन का वृत्तान्त है जो सब के हृदयमें विराजमान होकर वह स्वयं लिखरहा है। सारे पदा-

ये परमात्मा के शब्द हैं और बोलते हैं कि आओ २ मेरी ओर आओ। जो ईश्वर ध्वनि को नहिं सुनता वह बहरा है जो मनुष्य उत्पन्न हुए पदार्थों के सौन्दर्य को नहीं देखता वह अन्धा है सौन्दर्य विवेक धर्म एक ही है तर्क से हम परमात्मा का चिन्तन करते है परन्तु सौंदर्य साक्षात दर्शन करता है। वह मनुष्य जो इन सकल पदार्थों को निरीक्षण करके धन्यवाद गायन नहीं करतावह गूंगा है। संसार की सुन्दर वस्तुयें एक विशेषसौंदर्य की सत्ताकी साक्षी हैं प्रत्येक मधुर वस्तु अत्युत्तम मधु को दर्शाती है जोअन्य पदार्थों के सौंदर्य और उत्तमता श्रोत है। उसी को परमात्मा कहते हैं जो वस्तु ईश्वर के समीप है वह उत्तम है और जो दूर है वह निकृष्ट कहाती है। प्रत्येक पवित्रतायें उस पवित्रता के श्रोत को दर्शाती हैं। जो अच्छा है वह अपने से अत्युत्तम श्रेष्ठता के अस्तित्व का प्रमाण है उच्च स्वर से सकल पदार्थ पुकार रहे हैं कि परमात्मा सब में विद्यमान है। जब हम किसी वस्तु से प्यार करते हैं। तो उसके अभ्यान्तर वास करने वाले परमात्मा के कारण से करते हैं प्यासा मनुष्य जल को अभिलाषा इसलिये करता है कि जल में परमात्मा निवास करते

हैं परमात्मा भक्तों के हृदय में प्रकट होते हैं महान् से महान् सुख अच्छे कामों के चिन्तन से होता है परमात्मा उनसे प्यार करते है जो बुरे कामों से घृणा कर श्रेष्ठ कार्यानुरत रहते हैं।

साधारण नियम

१. मनुष्य का पहला कर्तव्य यह है कि सद्गुरु की शरणमें जावे और उन की कृपा सम्पादन करने के लिये शुद्ध चित्त से उन की सेवा करे।
२. उन सद्गुरु के वचनों पर दृढ़ विश्वास रक्खे।
३. एक ही मत मार्ग का अनुसरण करे।
४. साधु सज्जन का सत्संग करे।
५. विषयों के अधीन न हो।
६. शत्रुओं को मित्र बनावे।
७. अधिक उपाधि न बढ़ावे।
८. निरन्तर सारासार का विचार करता रहे।
९. भूत मात्र पर दया रक्खे।
१०. अहर्निश परमात्मा का ध्यान करके उन पर दृढ़ आस्था रक्खे।

मंगलाचरण ।

दोहा–ओ३म् निरंजनं, दुखभंजनं ररंकार ओङ्कार ।
सत्य पुरुष सोऽहं तुही अलखं सर्वाधार ॥

हो गुरु धारी बेलख माया जी ।

अखण्ड मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ॥

गुरु र्ब्रह्मा गुरु विष्णु र्गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरु रेव परं ब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः ॥

श्री गुरु श्री गोविन्द पद मंगल हित करुं ध्यान।
मंगल श्री ब्रजराज घर जो पाऊं सन्मान ॥

काहू के बल भजन को काहू के आचार।
दास भरोसे राम के सोवत पांव पसार ॥

शब्द १

ओ३म् निरंजन ररंकार प्रभु सोऽहं सत्यनाम करतार ।
अच्युत, गुरु गोविन्द दातार परमानन्द रूप निरधार।
एक अखण्ड ज्ञान, भण्डार तुमरी ज्योति का उजियार।
मैं, मैं, मैं, पन सर्वाधार, नेति नेति कर बेद उचार ।
राम आत्मा अपरम्पार शङ्कर ब्रह्म सर्व का सार ।
ओत प्रोत सब में निरंकार, जीवन प्राण आप ओंकार

हरि नारायण अग्नि तार देव देव मैं करूं हूं पुकार ।
कृष्णानन्ता चल हं गौड़, हुं फट अक्षा सर्व पसार
बिनवों तुम को बारम्बार प्रीतम प्यार करो उद्धार ।
तद्धन गणपति नैन मझार, होवे अनन्त तुम्हें नमस्कार

शब्द २

दोहा—पुरुष प्रकृति ईश मिल अकार उकार मकार ।
सब वेद का मूल है एक शब्द ओंकार ॥
राम नाम के लेत ही होत पाप को नाश ।
ज्यों चिनगारी आग की पड़े पुरानी घास ॥
तुलसी अपने राम को रीझ भजो चाहे खीज ।
उलटा सीधा जामिये पड़े खेत में बीज ॥

हमारे प्रभु एक तुमही ओंकार । टेक ॥
मात पिता गुरु बन्धु सहोदर धन विद्या परिवार । टेक
मन बल बुद्धि प्राण तुम ही हो नयनन में उजियार ।
हरि होकर हरे रंग मेंदीसो पत्र पुष्प फल डार ॥ह० १
धरणी आकाश शशि और तारे बिजली में चमकार ।
ऊपर नीचे पर्वतसागर सब तुम अपरम्पार ॥ह० २॥
तुम ही सूरज में ही गरजो बरषो अमृतधार ।
एक धुनि हो तुम से सब की तुमरा वार न पार ॥ह०१॥
सुंदर शक्ति विकाश शुद्धता हमको दे दातार ।
काम क्रोधमद शोभ निवारो परमानंद दो प्यार ॥ ह० ॥

शब्द ३

दोहा–अच्युत अगम अपार तुम तद्दन ब्रह्म अनंत।
परम हंस अज ईश शिव सब के आद्यगुरु अन्त॥
भजोरे मन शुद्ध सच्चिदानन्द। टेक
सकल ब्रह्माण्ड पुकारें जिनको अनन्त अपार अखण्ड॥
पुष्प कुमार गगन में तारे वरणत सूरज चन्द॥
सभी वस्तु की सुन्दरताएं जितलावें गोबिन्द॥
ओंकार अज ज्योति स्वरूपा पूरण परमानन्द॥

शब्द ४

दोहा- अवगुण किये तो बहु किये करत न मानी लाज।
पतित उधारण नाम सुन विसर गये सब काज॥
हमारे प्रभु अवगुण चित्त ना धरो।
समदर्शी है नाम तुम्हारो चाहो तो पार करो। टेक
इक नदिया इक नार कहावत मैलो नीर भरो।
जब मिल गयो तब रूप एक भयो गंगा नाम परो
एक लोहा पूजा में राखे एक घर वधिक परो।
कंच नीच पारस नहीं जाने कंचन करत खरो।
अबकी बेर मोय नाथ उभारो नहीं प्रणजात टरो॥
यह माया अमजाल निवारो सूरदास सगरो॥

शब्द ५

दोहा–भाव पात में अर्प कर सुन्दर जीवन फूल।

ईश्वर के अर्पण कर यही ज्ञान का मूल ॥

दीनानाथ दयानिधि स्वामी कौन भांति मैं तुम्हें रिझाऊं
श्रीगंङ्गा चरणों सेनिकसी शूचो मोर कहाँ से प्रभु लाऊं
काम धेनु कल्पवृक्ष तुम्हारे कोनसो पदार्थ भोग लगाऊं
चार वेद तुम मुख से भाषे,और कहा प्रभु पाठ सुनाऊं
अनहद बाजे बजत तुम्हारे,ताल मृदङ्ग क्या शंख बजाऊं
कोटिभानुथारे नखकी शोभा,दीपक लेप्रभु कहा दिखाऊं
लक्ष्मी थारी चरणन को चेरी,कौन द्रव्य प्रभु भेट चढ़ाऊं
तुम तिरलोकी के कर्ता हर्ता,तुम्हें छोड़ प्रभु कौन पै जाऊं
सूरश्याम प्रभु विपत बिदारन,मनवांछित फलतुमही सेपाऊं

शब्द ६

दोहा–गुरु को कीजे दण्डवत कोटि कोटि प्रणाम ।
कोट न जाने भृङ्ग को गुरु करले आप समान ॥

मेरे हो मनमाना है गुरु नजर निहाल दयाल । टेक
अधर आकाश अधर वाको बङ्गला घट२ आपसमाना है॥
सब से परे दूर नहीं नेड़े अद्भुत रूप लखाना है ॥
भव सागर से उतरण कारण गुरु शब्द जलयाना है ।
षड़ दर्शन में पड़ी जो खट पटी बड़ा सोई जिनजाना है।
बीसा सन्तशरण सतगुरु की जिन डारा मान गुमाना है।

शब्द ७

मन परदेशी हो वे नहीं अपना देश । टेक॥
सत् का कहना सत् में रहना आनन्द रूप किसीका भयना
जो कोई कहे सभी को सहना येही रटन हमेश ॥ मन० ॥
गुरु की बचन सत्य कर मानो जगत जाल झूठा कर जानो
तत्व मसि का रूप पिछानो कट जांय करम कलेश ॥मन०॥
जो दीखे सो रूप हमारा कोई नहीं है हम से न्यारा ।
मित्र और शत्रू कोई न हमारा मिट गये राग और द्वेश
शाह गुरु शुकदेव विराजे चरणदास चरणों में साजे ।
गुरु के बचन कभी नहीं त्यागे यही सत्य उपदेश ॥ मन॥

शब्द ८

दोहा - अलख इलाही एक है नाम धराये दोय ।
कहे कबीर दो नाम सुन भरम पड़ो मत कोय ॥
अलख संगमिलियोरे, तुम चलो दिवाने देश ।टेक
संत सदा उपदेश बतावें घट अंदर दीदार लखावें ।
तन मन अर्पण करियोरे ॥१॥
शब्दविहंगम बाजे तूरा कोटि भानु जहां भभके नूरा ।
बंक नाल सुध करियोरे ॥२॥
पहले पहर सुघर नर जागे चार चौक अनहद से आगे।
अब चल कबहूं न चलियोरे ॥३॥

सुषमन देश विहंगम शोरी माया गस्त फिरे चहुंफेरी।
भरम भूल मत रहियो रे ॥४॥
इस पद का कोई भेद निहारेकहै कबीर रहदास बिचारे
नाम को व्यवहारी कोई मिलियो रे ॥५॥

शब्द ६

दोहा–हंसा सोहं तारकर सुरत मकरिया पोय।
अर्धं उर्धनट ज्यों फिरे सहजी सुमरण होय ॥

है जहां का बसा फेर ना मरेरे–हंसा चाल बसोवा देश।
टेक॥ जाहां अगम निगम दोउ धाम बास तेरा परेसेपरे।
जहां वेदों की गमनांय ज्ञान और ध्यान भी उरे ॥१॥
जहां बिन धरणी की बाट चरणों ते बिना गमन करे।
जहां बिन शरवण सुनले नयनों के बिन दरश करे ॥२॥
तहों बिन देही एक देव प्राणों के बिना श्वास भरे।
जहां जगमग जगमग होय उजारो दिन रात रहे॥३॥
यहां प्रेम नगरिया के घाट अधर दरियाय बगे।
जहां संत करे असनान दूजा तो कोई न्हाय न सके ॥४॥
जाके न्हाये से सुख होय तपत तेरे तन की मिटै।
तेरे जन्म मरण मिट जांय चौरासी का फंद कटे ॥५॥
यों कहते नाथ गुलाब अमरापुर यारा बास करे।

गुण गाव भानीनाथ आनन्द में सदा लगाही रहे ॥३॥

शब्द १०

दोहा—हम बासीउस देश के जहां जात वर्ण कुल नांह।
शब्द मिलावा हो रहा देह मिलावा नांह ॥

बहुर नहीं आऊंगा जाऊं हज़ारे देश ॥टेक॥

गुण की गटड़ी खोल दिखाऊं पांच तीन की रचना लाऊं।
लग रहा सीधा तार गगन चढ़ जाऊंगा ॥ १ ॥
अपने गुण पांचों दे दीने अपने अपने उन ले लीने।
हो तुर्या असवार परम सुख पाऊंगा ॥ २ ॥
उलटी पृथ्वी नीर मिलाऊं ओले नीर तेज में लाऊं।
तेज पवन में मेल पवन नभ लाऊंगा ॥ ३ ॥
टूटगई आस बास कित करिये
अपना न कोई कहो कहां रहिये
आठ पहर संग्राम मैं कैसे लाऊंगा ॥ ४ ॥
छूट गया भोग स्वाद गया जीका
जब लग रहा तब लग रहा फ़ीका।
देखत आवे छींक तुरत उठ जाऊंगा ॥ ५ ॥
शब्द विहंगम बास बसाऊं
जो कोई सुने उसका जनम मिटाऊं
अजब रङ्गीला ताक उसी में लौ लाऊंगा ॥ ६ ॥

संता दीनी मौज अजब घर छाऊं
सुख सागर में डेरा लाऊं।
गुण गावे भानी नाथ अधर घर छाऊंगा ॥ ७ ॥

शब्द ११

दो०—भीखा बात अगम्भ की कहन सुनन की नाहिं
जो जाने सो कहैं नहीं कहै सो जानै नाहिं।

महरम हो सोई जाने भई साधो ऐसा देश हमारा हैरे।
बिनबादल बिजली वहां चमके बिन सूरज उजियारा हैरे॥
बिना नयन वहां मोती पुरोवे बिन स्वर शब्द उचारा हैरे।
भंवर गुफा में अनहद बाजे मुरली बीन सितारा हैरे॥
नरमल बूदं मिली दरिया मे नहीं मीठा नहीं खारा हैरे
जात वरण वहां सूझत नाहीं ना वहां वेद विचारा हैरे।
वहां जाय ब्रह्म बिन बैठे कहन सुनन से न्यारा हैरे॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो पहुंचेगा पहुंचन हारा हैरे।
इस पदको जो समझत बूझत अलख लखे साई प्यारा हैरे॥

शब्द १२

दोहा-हम बासी उस देश के जहां पार ब्रह्म का खेल।
अगम का दीवा बल रहा बिन बाती बिन तेल॥

साधो हम हैं वासी वा देश के॥ टेक॥
हमरे देश में कोई चांद न सूरज रात दिना रहैं एक से।

सुरत निरत का जहां ताना पूरा कपड़ा बुने अलेख के।
हमारा कपड़ा महंगा बिकत है पहरें संत विवेक के।
हमरे देश का मरम को जाने सदा रहें सुख एक से।
कहैं कबीर सुनोभाई सन्तो साधू साहिब एक से।

शब्द १३

दोहा—गुरु बिन माला फेरते गुरु बिन देते दान।
गुरु बिन दान हराम है जाय पूछो वेद पुराण।
मेरे सारे दुख बिसर गये सतगुरू की मैंनेशरण लई टेक।
और सखी सब दुबली तूं बिरहन क्यों लाल।
अबिनाशी की सेज पर मौजां हुई है निहाल ॥१॥
अबिनाशी की सेज का कह कितना बिस्तार।
कहन सुनन कि गम नहीं पौढ़त बेपरवाह ॥२॥
सतवन्ती पीहर बसे अन्तर पिव का ध्यान।
कहती तो लाजां रहै ऐसा है आतम ज्ञान ॥३॥
हंसी नहीं मुसका गई रहे टकटके नैन।
कहैं कबिरा लखगये हे सखी सखी के सैन ॥४॥

शब्द १४

दोहा—जो कोई समझै सैन में वासे कहिये बैन।
सैन बैन समझै नहीं वासे कछु कहन ॥
मेरा राम सनेही जोगी रावलिया मेरीनगरी में उतराहै आय

चार कूंट की रम्मत करता धरनी धरे न पांव।
तीन लोक झोली में राखे राई में रह्यो समाय ॥ १ ॥
धावो सखी याय देखलें जाका रूप लखा नहीं जाय।
पीड़ो चाहे परतीत न छोड़ूं मेरे हिरदे में रह्यो समाय ॥
बरजी काहु की ना रहूं बिन हर देखे रहा न जाय।
अचरज रूप धरा अविनाशी श्रीनाथ गुलाब लुचाय ॥३॥

शब्द १५

दोहा - मन के बोहते रंग हैं छिन२ बद लैंहोय।
एक रंग में जो रहे ऐसा साधु कोय ॥
मेरा मन बानियारे अपनी बान कभी नाछोड़े। टेक।
हेर फेर के दोनों पलड़े अन्दर कानी डांडी।
मन में झूठ कपट हिरदे में हाठ चौंतले मांडी ॥१॥
पूरे बाट परे सरकावे कमतो बाट टटोले।
पासंग माहीं डांडी मारे बेगा बेगा बोले ॥३॥
घर तेरे में कुबध किराड़ी छिन २ में चित चरे।
कुनरा तेरा बड़ा हरामीं अमृत में विष घोले।
जल में तूही थल में तूही घट २ में हर बोले।
कहैं कबीर सुना भाई साधो भरम बंधा जग डोले ॥

शब्द १६

दोहा - मूरख को समझावता ज्ञान गांठ का जाय।

कोयला होय न ऊजला सो मन साबुन लाय ॥
वा घर कभी न जाना जो जाके हिरदे ही में पाप ।
मात पिता का कहा न माने गुरु के नहीं बचन में ।
पर तिरया से नेह लगावे सुरति नहीं भजन में ॥ १ ॥
कंचन मैला कभी न होवे दाग रति नहिं लागे ।
गठरी उसकी कौन छीन ले पहरे अपने जागे ॥ २ ॥
बाहर उजला अन्तर काला बुगले का सा भेस ।
बाहर मेल द्वेष हिरदे में भक्ति लगे ना लेश ॥ ३ ॥
गुरु मुख साधो पार उतर गये भव सागर जलतरिया ।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो हरका सुमरण करिया ॥४॥

शब्द १७

दोहा – मन के बहुते रंग हैं छिन २ बदले होय ।
इसके रंग जो ना रहे ऐसा बिरला कोय ॥

बौरा मन समझियोरे लोभी से तिरने का घाट ।टेक।
कथनी के शूरे घने सब बांधे हथियार ।
सत कहूं बिरला छूटे जिन बाजे तरवार ॥ १ ॥
शूरा रण में जाय के किस को देखे बाट ।
ज्यों २ पग आगे धरे आप कटे च हे काट ॥२॥
हीरा बीच बजार के सब निरखें साहूकार ।
इतने जौहरी नांह मिले सब की अकल खुवार ॥ ३ ॥

इतो [illegible] प्रीतम से प्यार ।
तन मन अपना वारि के रांह मिला दई डार ॥ ४ ॥
तन मन सौंपे गुरु अपने को सत्य शब्द पहचान ।
मुश्किल ते आसान होगई अब से सौंप दई जान ॥५॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो लीजो आप संभाल ।
चेता जाय तो चेत बावरे ना खायगा तोय काल ॥६॥

शब्द १८

दोहा—मन के मते न चालिए मनके मते अनेक ।
मन पर जो असवार हैं ते साधु कोई एक ॥
जिन्होंने मन मार लिया मैं तो उन सन्तों का हूं दास ।टेक
आपा मार जगत में बैठे नहीं किसी से काम ।
उन में तो कुछ अन्तर नाहीं सन्त कहो चाहे राम ॥
मन मारा तन बस किया सभी भरम भये दूर ।
बाहर तो कुछ सूझे नाहीं अन्दर झलके नूर ॥ २ ॥
प्याला पीलिया नाम का जी छोड़ा जगत का मोह ।
हमको सतगुरु ऐसे मिलगए सहज मुक्त गई होय ॥३॥
नरसी जी के सतगुरु स्वामी दिया अमीरस प्याय ।
एकबूंद सागर में मिल गई कहा करे यमराय ॥ ४ ॥

शब्द १९

दो०=शब्द ही मारे मर गये शब्द ही तज गये राज ।

जिन ये शब्द पिछानियां सरे उन्हीं के काज ॥
चोट सहली शेल की लागत लेतस श्वांस ।
चोट सहारे शब्द की तास गुरु मैं दास ॥
घायल ना जीवे जाके लगे शब्द के सेल । टेक ।
लागी लागी सभी कहैं रे लागी नाहीं एक ।
लागी जबही जानिये रे घाव न आवे मेल ॥ १ ॥
लागी उनको जानिये रे राम तजे अस खेल ।
अन्दर दीवा बल रहा रे घला प्रेम का तेल ॥ २ ॥
पढ़ना लिखना है नहीं रे सत संगत का खेल ।
चार वेद घट में बसे हैं साँचे गुरु से मेल ॥ ३ ॥
सतसंग सार अनेक हैं रे काटैं यम की बेल ।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो झूठे जगत के खेल ॥ ४ ॥

शब्द २०

दोहा—राम नाम मणि दीप धर जीभ देहरी द्वार ।
तुलसी बाहर भीतरो जो चाहे उजियार ॥
हरि रस ऐसा रे जाके पीये से अमर हो जाय । टेक ।
आगे आगे दौं जरै पाछे हरियल होय ।
बलिहारी वा वृक्ष की जड़ काटे फल होय ॥१॥
राम रस महंगा मोल का पीवे विरला कोय ।
हरि रस को तो जो जन पीवे धड़ पै शीश न होय ॥२॥

भक्ति करो तो कुल नहीं कुल बिन भक्ति न होय ।
दो घोड़ों के ऊपर हम ने चढ़ा न देखा कोय ॥३॥
भक्ति करो और कुल रहो अड़े रहो दरबार ।
दो घोड़ों की कौन चलावे चारों पे हो असवार ॥४॥
राम रस पीया नाम देव पीप और रइदास ।
दास कबीरा ने ऐसा पीया फिर पीवन की आस ॥५॥

शब्द २१

दोहा—जो सिर साटे हरि मिले तो पुनि लीजिये दौड़
नारायण ऐसी न होय गाहक आवे और ॥
बनजारिन नयन उघार (उठ विरहन सुरत संभार)
टांडा तेरा लद जायगा । टेक ।
टांडा तेरा लद चला है तू बिरहन रही सोय ।
जब जागी तब एकली है नयन गमावे रोय ॥ १ ॥
चन्दन की चौकी बनी है बीच में जड़ दिये लाल ।
हीरां कोघुंडी लगी है पच पच मरे सुनार ॥ २ ॥
लाखों सिर तू दे चुकी है यमराजा की भेट ।
एक शीश तैंने ना दीया है श्री नारायण हेत ॥ ३ ॥
सिर माटी का तूंमबरा है सखी कर के जान ।
सिर के सांठे हरि मीले तो भी सस्ता जान ॥ ४ ॥
कहैं कबीर सुनो केसवा थारी गत अगम अपार,

बिन सादा हरि नाम पर है सन्त उतारैं पार, ५

शब्द २२

दोहा-काम क्रोध मद लोभ की जब तक घट में खान।
तुलसी पंडित मूर्खा दोनों एक समान ॥

गली तो च्यारों बन्द पड़ी,
म्हारो पिया मिलन कैसे होय ।टेक।
काम क्रोध मद लोभ मोह ने घेरी च्यारों गैल।
इन गलियन मिरे प्रीत बसते कैसे करूं मैं वाको सैल ॥१॥
पांच पच्चीस पहरवा ठाड़े रोक लिये सब ठाम।
यह विधिना ने कैसी कीनी बैरी बसायो म्हारे गाम ॥२॥
आशा तृष्णा खड़ी दुहेली इनमें रहा समाय।
कनक कामिनी गहरा फन्दा अन्त तजो नहीं जाय ॥३॥
ज्ञान भक्ति वैरागयोग का मारग दिया बताय।
कहै कबीर सुनो भाई साधो ना कोई आवै न जाय ॥४॥

शब्द २३

दोहा-बालक रूपी साइयां खेले सब घट मांह।
जो चाहे सो करत है भय काहू का नांह ॥
आपही धारमधारीहो स्वामी आपही खेल खिलारी हो।टे०
तम्बू से असमान बनाये जमीं गलीचा डारी है।
चन्द सूरज दो मिसल बनाये तारागण फुलवारी है॥१॥

सुरत निरत की चौसर मांडो तीपासा जग सारी है।
जिसकी नरद जीतघर आवे सं नर सुघड़ खिलारी है।२
सतको चीन्ह बिहंगम चं रा जिसकी शून्य अटारी है।
जापर सत्गुरु राजी होवें उसका जगत भिखारी है॥३॥
अमरलोक क किया पयाना ज्ञान घोड़े असवारी है।
कहत कबीर सुनो भाई साधो अबके जीत हमारी है ४।

शब्द २४

दोहा—जहां दया तहां धर्म्म है जहां लोभ तहां पाप।
जहां क्रोध तह काल है जहां क्षमा तहां आप॥
कामक्रोध मद लोभ मोह ने होगुरु इनने मेरी मत मारी
केवल ब्रह्म रूप था मेरा पंच तत्व में लिया बसेरा।
इन्द्रिय आदि कर्म से लागी बुद्धि है सब से न्यारी ॥१
आदि जन्मका हूं अधिकारी दुःख में याद आई बुधस री
मनुवा खोज कनौजके देखा बिगड़ रही केसर क्यारी ॥२
शून्यसमाधमें जायसमाया चेला गुरुवा कुछ नाहीं पाया।
आपही आप पुकारत आया अब समझा मूर्ख सारी ॥३।
धुनही आसन अमर सिंहासन धुनमें प्राणकरे सुखवासन।
शरण मछन्दर गोरख बोले जाम २ हुआ हितकारी ॥४॥

शब्द २५

दोहा-धूम धाम में दिन गया स चत होगई सांझ।

एक घड़ि हरि ना भजा जन जननि भाई बांझ
भजन बिन बावरे तैंने हीरासा जनम गवांया । टेक ।
कभी न आया सन्ते शरणा ना तैं हर गुण गाया ।
बह २ मरा बैल की न्याई सांय रहा उठ खाया ॥
ये संसार हाट बनिये को सब जगसौदा आया ।
चातर माल चोगुणां कीना मूरख मूल ठगाया ॥२॥
ये संसार फूल संभल का शोभा देख लुभाया ।
मारी चोंच रुई निकस्याई मूड़ी धुन पछताया ॥३॥
ये संसार माया का लोभी ममता महल चिनाया ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो हाथ कछू ना आया ॥४॥

शब्द २६

दोहा सलिल मोह की धार में बहगये गहर गम्भीर ।
सूक्षम मछली सुरत है चढ़े जो उलटे नीर ।
मोह माया की धारा में जग बहगयोरी ।टेक।
रावण दुर्योधन से बह गये कोई रस धुजन रह गयोरी ॥
मैं मेरे में जगत जाय सब सत्गुरु नवका ह्वै गयोरी ।
यह संसार स्वप्न की लोला सत्गुरु मोत कह गयोरी ॥
जो कोई लाग्यो विषय भोग में सर्वस अपना दे गयोरी ।
जिस ने रटा राम को निश दिन वही यहांसे कुछ लेगयोरी
कहै रघुनाथ शरण गुरु की ले ब्रह्मरूप जीव हो गयोरी ।

शब्द २७

दो० ज्यों तिल मांही तेल है चकमक मांही आग।

तेरा साईं तोप में जाग सके तो जाग॥

मन्दर में कांहे ढूंढती फिरे जङ्गली में भगवान (घट ही में दीनानाथ) ॥टेक॥

मूरत तो मन्दर में मेली मुख से नाहीं बोले।

करनी पार उतरनी बन्दे वृथा जन्म क्यों खोले॥१॥

गऊ मुख से गंगा निकली पांचों कपड़े धोले।

बिन साबुन तेरा मैल कटेगा हर भजन हलुवा होले।२

तन कर कूंडी मनकर साबुन याही में शील समाले।

सुरत ज्ञान का करे न मोगरा दिलका दागन धोले॥३

शील सत्य की नवका चढ़के हर के दर्शन जले।

कहें कबीर सुनो भाई साधो पर्वत राई के ओलहे॥४॥

शब्द २८

दोहा-ज्ञानी भूले ज्ञान कथ निकट रहो निज रूप।

बाहर खोजे बापरो भीतर वस्तु अनूप॥

बागों ना जारे तेरी काया में गुलजार। टेक।

करणी क्यारी बांध के रे रहनी कर रखवार॥

दया पौद सूके नहीं क्षमा शील जल डार।१॥

मन माली पर बोध केरे संयम की कर बार।

दुर्मति काग उड़ाय के रे देखे क्यों न अहर । २ ॥
मन गुलाब चित्त केवड़ा रे फूल रही फुलवार ।
मुक्तिकली सदा खिल रही गूंथ पहरले क्यों न हार ।३
लोभ लहर गहरी नदी रे लख चौरासी धार ।
निगुरे २ बह गये संत उतर गये पार ॥ ४ ॥
अष्ट कमल दल ऊपर रे महिमा अपरम्पार ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो आवा गमन निवार ॥५

शब्द २६

दो० सत्य बराबर तप नहीं झूट बराबर पाप ।
जाके हिरदे सांच है ताके हिरदे आप ॥

सत्य नाम करतारे म्हारे सतगुरु,
निश्चय लड़ी सितारे मोरे रामा ॥ टेक ॥
राजा राम बसे घट भीतर बाहिर हाथ न आवे मोरे रामा
सतगुरु की तुमसेवा करलो वो तुम्हें राह बतावे मोरे रामा
नाभि कमलसे रस्ता चाल्यो,
सहजहि आवे जावे मोरे रामा ।
आगे महल त्रिकुटी कहिये,
वहां गये सुख पावे मोरे रामा ॥ २ ॥
महल त्रिकुटी जग मग झलके,
देखत ही मुसकावे मोरे रामा ।

झीनी झीनी बाज होय अनहद की,
आगे को =ठ धावे मोरे रामा ॥ ३ ॥
गुरु परताप संत की संगत,
खोजेंगे सोई पावे मोरे रामा।
श्रस्त मछन्दर जती गोरख बोले,
गुरु अपना दरशावे मोरे रामा ॥ ३ ॥

शब्द ३०

दोहा जैसे लकड़ी ढाक की ऐसा यह तन देख।
वामें केशू छुप रहा या में पुरुष अलेख ॥

बंगला भला बना दरवेश जामें नारायण परवेश। टेक
पांच तत्व को ईंट बनाई तीन गुणों की गारा।
छत्तीसों की छत बनाकर चिन गया चिनने हारा ॥
इस बंगले के दश दरवाजे बीच पवन का थंबा।
आवत जावत कोऊ न जाने देखो बड़ा अचम्भा। बंग०
इस बंगले में चौपड़ मांही खेलें पांच पचीस।
कोई तो बाजी हार चला है कोई चला जुग जीत ॥
इस बंगले में पातर नाचैं मनुवा ताल लगावे।
सुरत निरत कि पहर घुंघरू राग छत्तीसों गावे। बंग०
कहैं मछन्दर सुन बाले गोरख जिन यह बंगला गाया।
इस बंगलेके गानेवाला बहुर जन्म नहीं आया। बंग०

शब्द ३१

दो० कबीर हम घर जारो आपनो लियो पलीता हाथ।
अब घर जारैं तास को जो चलै हमारे साथ।।

साधो मूला बेटा जायो, गुरु परताप साधु की संगत
खोज कुटुम सब खायो ।। टेक ।।

ममता माई जन्मत खाई पाप पुण्य दोऊ भाई।
काम क्रोध दो काका खाये खाई तृष्णा दाई ।। १ ।।
रागद्वेष पारोसी खाये शुभ अशुभ दोउ मामा।
मोह नगर का राजा खाया तब पहुंचा उस धामा २
दुविधा दादी अहं बड़ दादा मुख देखत ही मूआ।
मंगल चार बधाई बाजी जब यह बालक हूआ ।३।
ज्ञान नाम धरयो बालक का शोभा बरणी न जाई।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो घट २ रहा समाई ।४।

शब्द ३२

दो० गुरुबिन भरमलगि भूंसता भेद लिये बिन श्वान।
केहरी वपु छाया निरखि परयो कूप अज्ञान ॥
अजि एजी साधो अब तो हरी को पायो।
कहनह कलहना मन की मेटी भय और भरम नसायो ॥
रूप न रेख कछू नहि वाके सोऽहं ध्यान लगायो।
अजर अमर अविनाशी देखो सिंधु सरोवर न्हायो ॥१

शब्द ही शब्द भयो उजयारो सत्गुरु भेद बतायो,
अपन को आपा ही में पायो ॥ २ ॥
जैसे कामिन सुतले सोई स्वप्ने माहिं भुलायो,
जाग परयो पलिका पर देखो, ना कहीं गया न आयो ॥ ३
जैसे कामिन कंठ को हीरा आभूषण बिसरायो ।
संग की सहेली भेद बतायो जीव को भरम नसायो ॥
जैसे मिरग नाभि कस्तूरी डोलत बन बन धायो ।
नाशा श्वास भई जब आगे पलट निरन्तर आयो ॥४॥
कहा कहूं वा सुख की महिमा गूंगे ने गुड़ खाया ।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो ज्यों का त्यों दरशायो ॥६

शब्द ३३

दोहा—अंगन बेल आकाश फल अनब्याई का दूध ।
ससासिंह के धनुष को खींचे बांझ का पूत ॥
लाडो मैंडुको री तू तो पानी में की रानी । टेक
कउवा तेरा भैया भतीजा चोल लगे दौरानी ।
बगला तेरा छोटा देवर वाय देख मुसकानी ॥ १ ॥
अंधे ने मणके को बींधा बिन अंगुली सूई चलाना ।
बिन ग्रीवा के माला पहरो बिन जिह्वा के वाणी ॥२॥
चार चिरैया मंगल गावें टींटा ताल बजावे ।

कहैं कवीर सुनेा भाई साधेा ये पद है निर्वाणी ।
जेा इस पद को निंदा करे है उसको नर्क निशानी ॥४

शब्द ३४

देाहा निश्चय हेाकर हरि भजे मन में राखे सांच ।
इन पांचन को बस करे ताहु न आवे आंच ॥
मारग में लूटैं पांच जनी । टेक
पांच पच्चीसों ने घेरा घाटा साधुजन चढ़गये उलटी बाटा
घेर लिया सब औघट घाटा कलियुग चमके सेलअनी ।१
आशातृष्णा नदियां भारी बह गये संत बड़े डिमधारी ।
जेा उभरे सेा शरण तिहारी पार लगावेा आप धनी २
बनमें लुटगये मुनिजन नागा डस गई ममता उलटा भागा
जाके कान गुरु ना लागा शृङ्गी ऋषि से आन बनी ॥३
शङ्कर लुट गये नेजाधारी परजा रैयत कौन बिचारी ।
भूल पड़ी कर्मन की मारी तिरगुण झुक रही तीन अनी ।
रामानन्द दिया गुरु हेला दास कबीर चरण का चेला ।
बंका मारग पंथ दुहेला सुमरथा सिरजनहार धनी ॥५॥

शब्द ३५

देा०–पक्षी खेाज मीन के मारग कहैं कबीर देा भारी ।
अपरम्पार पार पुरुषेात्तम मूरति की बलिहारी ;

चौपड़ मांडी पीय से रे तन मन धन बाजी लाय।
हारी तो पीव की भई रे जीतूं तो पिया मेरा है ॥१
चार गली घर एक है रे वर्ण २ के हैं लोग।
मनसा वाचा कर्मणा हे प्रीति निभैबो ओड़ ॥ २
लख चौरासी भरम के हे पोहपर अटकी आय!
जो अब के पोह ना पड़े हे बहुर चौरासी में जाय ॥
कहैं कबीर धर्मदास से हे जीत भई को हार।
अबके जो बाजी जीत जाय रे सो ही सुहागन नार ॥

शब्द ३६

दोहा- कबीर सोय के क्या करे बैठा रहु अरु जाग।
जाके सङ्गसे बीछरयो वाही के संग लाग ॥
मेरी सुरत सुहागन जाग री। टेक
क्या तू सोवे मोह नींद में उठके भजन बिच लाग री।
अनहदशब्द सुनो चितदे के उठत मधुरधुन राग री ।२
चरण शीशधर बिनती करियो पावेगा अचल सुहागरी।३
कहत कबीर सुनो म्हारी सुरता जगत पीठ दे भागरी४

शब्द ३७

मेरी सुरति गगन में जाय रही। टेक
त्रिकुटी महल पर चढ़ कर देखा,

अमृत वर्षे बादल गरजे,
बिजली चमक मन भाय रही ॥ २ ॥
दशवें महल में सेज पिया की,
चुन चुन फूल बिछाय रही ॥ ३ ॥
ब्रह्मानन्द देह सुध बिसरी,
सहज स्वरूप समाय रही ॥ ४

शब्द ३८

अनहद घन सिर पर बाज रहो । टेक ।
बाजत शंख मृदंग बांसरी घनगर्जन अति छाय रही ॥
सुनकर मस्त हुआ मन मेरा चंचलता सब भाज गई ॥
तन के कर्म धर्म सब छूटे लोक वेद की लाज गई ॥
ब्रह्मानन्द गिरा गम नाहीं सहज समाधि बिराज रही ।

शब्द ३९

घुंघट खोल दे तेरे पलकों के
आगे है राम भरम ने तोड़ दे । टेक ।
पलकों आगे अलख बावरी नूर रहा भरपूर ।
अन्दर बाहर सर्वस भरिया क्या नेड़े क्या दूर ॥ १ ॥
शिर से शक्क उतार चुनरिया परदा भरम उठाय ।
जब तुझे दरसे नित्य बावरी रोम रोम रहा छाय ॥२

दृष्टिन मुष्टित आवे सजनी पवना ते बारीक ॥ ३ ॥
दरिया लहर भेद ना बौरो जीव ब्रह्म न दोय ।
एक ही ब्रह्म सकल घट व्यापी दिलकी दुरमत खोय॥
हाथ में कङ्कन बांध सुहागन काय को लिया दुहाग ।
हाथ में मैंहदी नयनन सुरमा सारो श्रीनाथ गुलाब॥५

शब्द ४०

सुरत मेरी राम पलक मेरी राम से लगी समझ सुहागन
सुरता नार तीरथ में माया जाल मैं फंसो ॥ टेक ॥
लगनी लहंगा पहर सुहागन बीती जाय बहार ।
धन जोबन है पाहुना री आवे न दूजी बार ॥ १ ॥
राम नाम का चुड़ला पहरो निर्गुण सुरमा सार ।
नखबेसर हरि नाम कीरी उतर चलोने परले पार ॥२॥
ऐसे बर को कहा बरूं जो जन्मसड़ा मर जाय ।
बर पाऊं श्री सांवरो जी चुड़ला अमर हो जाय ॥३॥
में जान्यो हरि मैं ठग्यो जी हरि ठग ले गयो मोय ।
लख चौरासी मोरचे जी पल में हे डारे तोर ॥ ४ ॥
सुरत चली जहां मैं चली निरकार झलकार ।
अविनाशी का पौर पर रे मीरां करे पुकार ॥ ५ ॥

शब्द ४१

दोहा-शब्द बराबर धन नहीं जो कोई जाने बोल ।

हीरा तो दामों मिले, शब्द का मोल न तोल ।
शब्द झड़ लाग्यो हे बरसण लाग्यो रंग । टेक
जन्म मरण की चिन्ता भागी,
समरथ नाम भजन लौ लागी ।
म्हारे सतगुरु दीनी सैन, सत्य घर पागयोरी ॥१॥
चढी सुरत पश्चिम दरवाजा,
तिरकुटी महल पुरुष एक राजा,
अनहद की झनकार बजे जहाँ बाजारी ॥२॥
अपने पिया संग जाकर सोई,
संशय शोक रहा नहीं कोई ।
कट गये करम कलेश भरम भय भागारी ॥ बरसण ३
शब्द बिहंगम चाल हमारी,
कहै कबीर सतगुरु दई तारी,
रिमझिम रिमझिम होय काल वश आय गयारी ॥४

शब्द ४२

दोहा—गगन गरजे वर्षे अमी, बादल गहर गम्भीर
चहुं दिश दमके दामिनी, भीजे दास कबीर ॥
बादला झुक आया भीजे म्हारी कायारो चीर । टे॰॥
प्रेमघटा ओलर आइरे गगन से,
तनमन भीजगया हरि रङ्ग से ।

बरषे निर्मल नीर इन्दु ज्यों लहराया ॥ १ ॥
जहां वर्षे जहां बिजली चमके,
घन गरजे और दामिनी दमके ।
बर्षे अमृत धार इन्द्र ज्यों झड़ लाया ॥ २ ॥
बस्ती बसो चाहे बन उठ जावो,
तीरथ जावो चाहे मल मल न्हावो ।
जिनका तनमन होगया फकीर शब्दमें चितलाया ॥३॥
नाथ गुलाब दिया गुरु हेला
भानी नाथ सुनो निज चेला ।
उलट पवन की डाट गगन धारो घर छाया ॥ ४ ॥

शब्द ४३

दोहा---सुमरण से सुख होत है, सुमरे से दुःख जाय ।
कहैं कबीर सुमरण किये, स्वामी में मिल जाय ॥
भजन में होत आनन्द आनन्द । टेक ।
बरसैं शब्द अमी के बादल भीजें महरम सन्त ॥ १ ॥
कर अस्नान मगन होय बैठे चढ़ा शब्द का रंग ॥२॥
अगर बास जहां ततकी नदियां बहत धारा गंग ॥ ३ ॥
तेरा साहिब है तेरे माहीं पारस परसे अङ्ग ॥ ४ ॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो जपले ओ३म सोऽहं ॥५॥

शब्द ४४

दो०–राम नाम रटते रहो जब लग घट में प्राण ।
कबहुक दीनानाथ के भणक पड़ैगी कान ॥

तेरा जन राम रसायन माता । टेक ॥

प्रेम रसा निधि जाको उपजे छोड़ न कतऊ जाता ।१
सोवत हरिहरि, बैठत हरिहरि, हरिरस भोजन खाता
सुफलजन्म हरिजनका उपजिया कीनो है सात बिधाता
सकल समूह ले उधरे नामक पूरण ब्रह्म पिछाता ॥४॥

शब्द ४५

दो०–बेल होत वर्षा समय करत वृक्ष सौं प्रीत ।
प्राण गये छांड़े नहीं अपनी उत्तम रीति ॥

हूं वारी मुखफेर पियारे करवटदे मोय काहेको मारे टे०
करवत भला न करवट तोरी लागलगे सुन बिनती मोरी
तन चीरो तो मुखना मोड़ू लगी प्रीति अब कैसे तोड़ूं ।
हमतुम बीच हुआ नहींकाई तुमहो पुरुष नारहम होई
कहत कबीर सुना नरजोई हमन किसीके हमारा न कोई

शब्द ४६

दो०–पांच पखेरु पांच पग तीन चोंच मुख दोय ।
तिरलोकी को चुगो करै लखै सो पण्डित होय ॥

एसो २ हाल लखायो म्हारे सतगुरु,

देख अचम्भा आया रहो जी ॥ टेक

बिना मूल एक बिरछा देखा,

बिन पत्तर वाको छाया रहो जी ॥

बिना देव एक शक्ति देखी,

अलख पुरुष थारी माया रहोजी ॥१

बिन पानी स्नान बनावे,

बिन अग्नि तप आया रहो जी ।

धरणी नहीं जहां आसन मांडयो,

बिन धुनि ध्यान लगाया रहो जी ।२

भेद अभेद कहा नहीं जावे,

निर्मल मण्डप छाया रहो जी ।

जित देखूं तित आपा ही दीखे,

दूजा नजर नहीं आया रहो जी ॥ ३

पांच पचीसों करें रखवाली,

तिरगुण रंग लगाया रहो जी ।

निर्गुण सरगुण दोनों ठाड़े,

बीच में आप समाया रहो जी ।

उलटा वेद मरम कोई जाने,

काल जीत घर आया रहो जी ।

कहत कबीर सुनो भाई साधो,

प्रेम मगन हो के गाया रहो जी ॥५

शब्द ४७

दो०-काया काठी कालघुन, जन्म घुन २ खाय।
काया माहीं काल है, काहू भरम न पाय॥

चरखा चलता नाहीं रे मेरा चरखा हुआ पुराना ।टेक
पग खूंटा दोउ हिलने लागे बीच मण्डला ढलकाना।
सभी पखड़ीयां पड़गईं ढीली चलता नाहिं मन माना॥
नया चरखला रङ्गा चङ्गा सब का चित्त चुरावे ।
जब चरखे का रङ्ग उतर गया देखा हू ना भावे॥
रसना तकली ऊबल खागई कहो कैसे कर छूटे।
शब्द तार सीधा नहीं निकसे घड़ी २ पै टूटे॥३॥
मोटामहीन कातलो कुडियां कर अपना सुलझेड़ा।
कहैं कबीर सुनों भाई साधो चेतो क्यों न सवेरा॥४॥

शब्द ४८

दो०-शून्य शिखर में जाय के देखै विरला कोय।
अनहद का बाजा बजै झिलमिल २ होय॥

सोय नीको लागैं बाजे अनहद तूर॥ टेक
सोऽहं सोऽहं ध्वनि होतहै चहुंदिश रही भर पूर॥१॥
रैन दिवस घन घोर उठत है क्या नेड़े क्या दूर॥२॥
कहत कबीर सुनों भाई साधो बर्षे नूर ही नूर॥३॥

शब्द ४६

हरि भज मन मेरे पद निर्वाण,
बहुर न होवे तेरा आवन जान ॥टेक॥
सब ते उपजाई भरम भुलाई,
जिसे तू देवे तिसे बुझाई ॥१॥
सत्गुरु मिले तो संशय जाई,
किसे पूजे दूसरा नज़र न आई ॥२॥
एके पाथर कीजे भाव,
दूजे पाथर दीजे पाव ॥३॥
जो वह देवता तो वह भी देवा
कहै नाम देव हरी की सेवा ॥४॥

शब्द ५०

मैं बौरी मेरा राम भतार रच रचना को करूं शृङ्गार टे०
भले निन्दा निन्दो लोग तन मन धन राम प्यारे योग ॥
बाद बिवाद कहु से नहीं कीजे रसना राम रसायन पीजे॥२
अब जिये जान ऐसी बन आई मिलूं गोपाल निशान बजाई
अस्तुति निन्दा करो नर कोई नामे श्री रङ्ग भेटल होई

शब्द ५१

दो०—सभी खिलौना खाण्ड मध्य खाण्ड खिलोनेमाँह
ऐसे ही सब जग ब्रह्म में ब्रह्म जगत के मांह ॥

एक अनेक व्यापक पूरक जित देखूं तित सोई । टेक
माया चित्तर बिचित्तर बिमोहित बिरला बूझत कोई ॥१
सब गोबिन्द है सब गोबिन्द है गोबिन्द बिन नहीं कोई
सूत ऐक मणि सहस्त्र जैसे ओतप्रोत प्रभु सोई ॥ ३ ॥
जल तरङ्ग और फेन बुद् बुदा जल से भिन्न न होई ४
यह प्रपञ्च पार ब्रह्म की लीला बिचरत आन न कोई ५
मिथ्या भ्रम और स्वप्न मनोरथ सत्य पदार्थ जाना ।।६
सुकृत मनसा गुरु उपदेशो जागत ही मन माना । ७।
कहत नामदेव हरि की रचना देखो हृदय बिचारी ।८
घट घट अन्तर सब निरन्तर केवल एक मुरारी ।। ९ ।

शब्द ५२

दो०-नुगरा मानस मत मिलो पापी मिलो हज़ार ।
एक नुगरे की पीठ पै सौ पापियों का भार ।।

मनवा तुझे है जरूर गुरु कोई धारो रे टेक ।।
बिरले जीव वचन गुरु माना उनका चढ़ा सरूर ।। १।।
शांति सरोवर मंजन कीना छोड़ा सभी ग़रूर ।। २ ।।
अन्तर दृष्टि करी घट भीतर निरखा झिल मिल नूर ३
पद्म दास फिर सत्य लोक में निरखा कुल हुज़ूर ।। ४।।

शब्द ५३

दो०-गुरु समान दाता नहीं, याचक शिष्य समान ।

तीन लोक की सम्पदा, सो गुरु दीनी दान ॥
हमारे गुरु ने दीनी है ज्ञान जड़ी। टेक
यह तो जड़ी मोय प्यारी लागे अमृत रस की भरी ।१
काया नगर में अधर एक बंगला वा में गुप्त धरी ॥ २
पांच नाग पचीस नागिनी सूंघत तुरत मरी ॥ ३
इस काली ने सब जग खाया सत्गुरु देख डरी ॥ ४
कहैं कबीर सुना भाई साधो लय परधार तरी ॥ ५

शब्द ५४

दो०-मैं अपराधी जन्म का नख शिख भरा बिकार ।
तू दाता दुख भञ्जना मेरी करो संभार ॥

लज्जा मोरी राखो ना श्याम हरि ।टेक
कोनि कठिन दुसासन मोते गह कैशों पकरी ॥ १ ।
आगे सभा दुष्ट दुर्योधन चाहत नग्न करी ॥ २ ॥
पांचो पण्ड सभी बल हारे इन से कछु न सरी ॥ ३
भीष्म द्रोण विदुर भये विस्मय इन सब मौन धरी
अब नहीं मात पिता सुत बांधव एक टेक तुमरी ॥५॥
बसन प्रवाह दिये करूणा निधि सेना हार परी ॥६॥
सूरदास जब सिंह शरण लई स्यारों की काहि डरी ॥७॥

शब्द ५५

दोहा—प्रेम २ सभी कहें, प्रेम न चीन्हे कोय ।
जीम प्रेम साहिब मिलो, प्रेम कहावे सोय ॥

जगत् में झूठो देखी प्रीत । टेक

अपने सुख से सब जग लागे क्या दारा क्या मीत ॥१
मेरो २ सभी करत हैं हित से बांधों चीत ॥२॥
अन्त काल संगी नहीं कोई यह अचरज कि रीत ॥३॥
मन मूरख अजहूं नहीं समझत सिख दे हारो नीत ॥३॥
नानक भव जल पार परे जो गावे प्रभु केगीत ॥५॥

शब्द ५६

दोहा—संगत से सुख ऊपजें कुसंगत से दुख होय ।
कहैं कबीर तहां जाइये साधु संगजहां होय ॥

सन्त समागम है आज हमारे हो रंग। टेक

कथा कीर्तन गावन धावन बहुत सुने परसंग ॥१॥
दिल दरिया में भंवर परत हैं उठ रहे अनन्त तरंग ॥२॥
त्रिकुटी महल में चाल बसो ना वहत धारा गंग॥३॥
क्या कहूं कुछ कहत न आवे मूरत अचल अभंग ॥४॥
दास गरीब मिटे सब झगड़ा करो साध सत्संग ॥५॥

शब्द ५७

दो०–हरि व्यक्ति की पीठ पै अनन्त शक्ति रही विराज।
अगम निगम खोजत फिरे कोई न पावे काज ॥

हरि की गति नहीं कोउ जाने । टेक

जोगी जती तपी पच हारे अरु बहू लोग सियाने ॥१॥
छिन में राव रङ्क को करई राव रङ्क कर डारे ॥ २॥
रीते भरे भरे ढरकावे यह ताको व्यवहारे ॥ ३ ॥
अपनी माया आप पसारे आप ही देखन हारा ॥ ४॥
नाना रूप धरे बहुरङ्गी सबते रहै नियारा ॥ ५ ॥
अनन्त अपार अलख निरंजन जिन सब जग उपजायउ
सकल भरम तज मानक प्राणी चरण ताहि चित लायउ

शब्द ५८

दो०–मानुष जन्म दुर्लभ है, मिलै न बारम्बार ।
तरुवर से पत्ता झड़े, बहुरि न लागे डार ॥

सब कुछ जीवत को व्यवहार । टेक

मात पिता भाई सुत बान्धव और पुन घरको नार ।
तनसे प्राण होत जब न्यारो टेरत प्रेत पुकार ॥ १ ॥
आधी घड़ी कोऊ नहीं राखत घरते देत निकार ॥३॥
मृगतृष्णा ज्यों जग रचना है देखो हृदय विचार ॥४

सत्गुरु शरण सन्त की सेवा काम क्रोध मद मार ॥५
कहै नानक भज राम नाम नित्य जाते होय उद्धार ॥६

शब्द ५९

सत्गुरु मिले म्हारे सारे दुख बिसरे,
अन्तर के पठ खुल गये री।
ज्ञान की आग जली घट भीतर,
कोट कर्म सब जल गये री॥
पांच चोर लूटें थे रात दिन,
आप ते आप ही टल गये री।
बिन दीपक म्हारे भया उजाला,
तिमिर कहां जाने मस गये री॥
तिरबेणी से म्हारे धार बहत है,
अष्ट कमल दल खिल गये री।
कोटि भानु म्हारे हुआ प्रकाशा,
और ही रङ्ग बदल गये री।
अठसठ तीरथ हैं घट भीतर,
आपस में रल मिल गये री॥
शून्य मन्डल में बर्षा हुई,
अमी के कुन्ड उमल गये री।
कहत कबीर सुनो भाई साधो,

नूर में नूर जो मिल गये री ॥

शब्द ६०

दो०-तीरथ न्हाये एक फल सन्त मिले फले चार।
सत्गुरु मिलें अनेक फल कहै कबीर बिचार॥

मैं कैसे आऊंगी सांवरिया थारी बिकट नगरिया टेक।
नाम निशानी थारा पन्थ दुहेला,
चढ़त देख मेरा तन मन जरिया।
जब लग नेजू थारी पहुंचत नांही,
तब लग आवे खाली गगरिया ॥२
बेगमपुर सोईजन जावें,
रोम२ जिन के प्रेम को पुरिया ॥ ३ ॥
कहैं कबीर सोई जन पहुंचे,
ब्रह्म अग्र पर जिन का तनमन जरिया ॥४

शब्द ६१

दो०-श्वांस २ में राम जप, वृथा जन्म मत खोय।
ना जानूं इस श्वांस का, आवन होय न होय ॥

तुम राम सुमर लो मंज़िल कठिन पड़ी ।टेक।
श्वांस तेरा बे बिरथा जावे मानुष जन्म फेर नहीं पावे
आंख खोल जरा किधर लखावे शिर पर मौत खड़ी ॥

भाई बन्धु तेरा कुटुम्ब कबीला यम लेचले जब होगयाढीला
नारी भी तेरी फैल छबीला रोवेगी खड़ी खड़ी ।।
इन्द्री वेग बड़े बलवानो वेद पढ़े पण्डित मुनि ज्ञानी।
हार चले स्वामी ब्रह्मचारी डुल गये घड़ी रे घड़ी ।।
चक्षु रूप अनाखा चाहैं नाक कहैं हम इतर लगवें ।
कान कहैं मानोगन्धर्व गावें पांचों की बन्धी हैलड़ी ।।
रसना रण हत्या चढ़वावे काम जो वैश्या से पिटवावे ।
हरनन्द कहै भाई राम बचावे भूलो न एक घड़ी ।।

शब्द ६२

तू तो कोई अजब है तेरा अजब तमाशा जग में जोर।टेक।
तुही राम तैंने रावण मारा तू है नन्दकिशोर ।
तुही इन्द्र इन्द्र सन तेरा तू बरसे घग घोर ।। १ ।।
तुही ब्रह्मा तुही बिष्णु महादेव तू कमला पति गौर ।
रूपों में सब रूप धरै है तुही करे है किलोर ।। २ ।।
पांच तत्व और तीन गुणों में दशों दिशा चहुं ओर ।
पिण्ड ब्रह्माण्ड में तु ही बिराजे तू पूरण सब ठौर ।।
तू ही गुप्ता तू ही मुक्ता घट २ ब्रह्म चकोर ।
चरण दास रोचक ने भाषे दूजा नहीं है कोई और ।। ४ ।

शब्द ६३

दो०- वह दिन गया अकार्थी, संगत भई न सन्त ।
प्रेम बिना पशु जीवना, भक्ति बिना भगवन्त ॥
अच्छे दिन पीछे गये, हरि से किया न हेत ।
अब पछताये होत क्या, चिड़िया खाया खेत ॥
हरि के नाम बिना तेरा जन्म अकारथ जाय ॥ टेक
जो नर बैठें सभा बिरानी भजन भागवत नाहिं सुना
वे नर होंगे अब अपराधी माता ने एक पशु जना ।१
कोटि यज्ञ और कोटि गलीचे दान करो सुमेर घना ।
बिना भजन तेरी मुक्ति नहोगी अठसठ तीरथ न्हावे नन्हा
ध्रू सुमेर सभी डिग जायेंगे शेषनाग धरणी धरना ।
चांद सूर्य एक छिन में जायेंगे तूनर जीवे कितना दिना॥
सात समन्दर पार उतरले ना कोई होगा अपना ।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो यह जीवन जैसे सुपना ॥४

शब्द ६४

चरखा तोहि अजब मिला तूतो कात सुहागन नार ।
कारीगर ने घड़ा चरखला चौंसठ बन्द लगाय ।
पूर्व जन्म से तोहि मिल्यो है काते न मन हर्षाय ॥१
शील धर्म व्रत नेम खूंटड़ी सुन्दर ना हिल जाय ।

चितजतनो से बीस पंखड़ी चौकस बंद लगाय ॥ २
मन माल है नत्याग बावरी मत की नाय बनाय ।
तप तकला और दया दमड़का चरखा चित्त बनाय ।३
राम नाम की तार बांध ले सुरता मत गरभाय ।
शम्भुनाथ की नाव झोझरी सत्गुरु पार लंघाय ॥ ४

शब्द ६५

दो०–सहज ही धुन लाग रही, कहे कबीर घट मांह ।
हृदय हर २ होत है, मुख को हाजत नांह ॥

हर २ हर हो रही दिवे में और बार्ता रे सब झूठी ।टेक
प्रेम घटा म्हारे सत्गुरु लाये अमृत बूंदां हद मीठो ।
तिरवेणी के रङ्ग महल में साधां लालां हद लूटी ॥१
रुणझुण २ बाजे बाजैं जगमग झलक रही ज्योति ।
ओंकार के सोऽहंकार में हंसला चुग रहा निज मोती ॥
पांच चोर तेरी काया नगर में इनको पकरो ने शिरचोटी
पांचों को मार पचीसोंको बशकर जबजानूंगा तेरीबुध चोखी
सत् सुमरण का सेल बनाले ढाल बनाले धीरज को ।
काम क्रोध मन मार हटाले जब जानूंगा तेरी रजपूती ॥
पक्को घड़ी का तोल बनाले कारय न राखो एक रती ।
शरणमच्छंदर जति गोरख बोले अलख लखे सोइ खराजती

शब्द ६६

सो म्हारे साधो राम नाम धन खेती ॥ टेक
मन कर हरिया सुरत बरधिया ज्ञानध्यान दोउ कोली।
ओ३म् नामको बीज जो बोया उपजी नव निध खेती॥
ध्रू बोई प्रहलाद ने बोई उनकी हुई है अगेती।
काम क्रोध के जो नर बश हैं उनकी पड़त पछेती॥
चोर न चोरे राज न डांडे भेजन लगत टके की।
इस खेती में बहुत नफा है कहियो संतन सेती।
मीरां के प्रभु गिरधर नागर आन मिलो हित सेती॥

शब्द ६७

सासरे में ना जाऊंगी मोय गुरु मिले रैदास। टेक
एक बेल के दो तूमरी एक ही उनकी जात।
एक तो रुडती डोलै गलिन में एक सतगुरू केहाथ ॥१
एक मिट्टी के दो हैं बर्तन एक ही उनकी जात।
एक में घलते मक्खन मिश्री एक धोबी के घाट ॥२॥
आवे गयों की पनहीं गांठै बैठयो सरै बजार।
भूखों को तो भोजन देता आखिर से जात चमार ॥३॥
काख में से रापी काढ़ी चीरा अपना गात।
चार युगों के दोखै जनेऊ आठ गांठ नव तार ॥४॥

अपने महल से मीरा उतरी घड ही में गंगा न्हाय ।
यां पूजूं इस रहदास के अमर लोक लिये जाय ॥५॥

शब्द ६८

सो राणा जी तैं जहर दियो म्हाने जानी ।टेक
भर २ दिये जहर के पियाले हू गयो अमृत पानी ॥ १॥
जब लग सोना कसिये नांहीं होत न बारा बानी ॥२॥
मोय भरोसा श्यामसुन्दर का मेरी घटत न कानी ॥३॥
मीरां के प्रभू गिरधर नागर चरण कमल लिपटानी ॥४॥

शब्द ६९

पढ़ो रे भैया कृष्ण गोबिन्द मुरार ।टेक
कहै प्रहलाद सुनो भाई बालक लीजो जन्म सुधार । १
को है हिरणाकुश अभिमानी जो सके तुमको मार॥२॥
राखन हारो और कोई है श्याम धरे भुज च्यार॥३॥
सूरदास प्रभु शरण तिहारी तुम सब के घर बार॥४॥

शब्द ७०

दो०–राम नाम को अंक है सब साधन है शून्य ।
अंक गये कछु है नहीं अंक रहे दशगून ॥
बसो जी म्हारे नयनन में सिया राम ॥टेक॥
जनक नन्दिनी जगत् बन्दिनी रघुनायक घन श्याम।१।

सरजु के तीर अयोध्या नगरी चित्रकुट निज धाम ॥२
कनक मण्डप तले रतनसिंहासन युगल मूरति अभिराम
तुलसिदास प्रभुकी छबि निरख लजत कोटिशत काम ।

शब्द ७१

क्या तन मांजता रे आखिर माटी में मिल जाना।टेक
माटी ओढ़न माटी पहरन माटी का सिरहाना ।
माटी का कलबूत बनाया जामे भवर समाना ॥ १ ॥
मात पिता का कहना मानो हर से ध्यान लगाना ।
सत्य बचन तुम निश दिन बोलो सबको सुख पहुंचाना ॥
इक दिन दुहले बने बराती शिर पर ढुले निशाना ।
इक दिन जाय जङ्गल में सोवे कर सूधे पग ताना ॥
पढ़ना लिखना कभी न छोड़ो जो चाहो कल्याणा ।
सब के स्वामी पालन कर्त्ता उनका हुकुम बजाना॥ ४॥

शब्द ७२

अवधो सो योगीगुरु मेरा जो इस पद का करे निवेरा।
तरु वर एक मूल बिन ठाडा बिन फुले फल लागे ।
शाखा पत्र कछु नहीं वाके अष्ट कमल दल गाजे ॥१॥
चढ़ तरुवर दो पक्षी बोले एक गुरु एक चेला ।
चेला रहा जगत चुन खाया गुरु निरन्तर खेला ॥ २॥

शून्य शिखर पर गाय बियानी धरती क्षीर जमाया।
माखन रहा सो सन्तन खाया छाछ जगत भरमाया॥
पक्षी खोज मीन के मारग कहैं कबीर दो भारी।
अपरम्पार पार पुरुषोत्तम मूरति की बलिहारी॥४॥

शब्द ७३

सुनो धर्म कर्तव्य मनुष्य का सर्व काल जो सुख दाई।
सुन कर ग्रहण करे श्रद्धा से बने काम उस का भाई॥
दुख में दुखी न होय भूल कर सुख में नहीं जो हर्षावे।
हानि लाभ में रहे धीर चित्त जरा न मन में घबरावे॥
क्षमा शील सन्तोष शान्ति कभी न मन से बिसरावे।
विद्या विनय विवेक बुद्धि में बसे तो सुख सम्पत पावे॥
रहे पवित्र शुद्ध तन मन से तजे कपट और कुटलाई॥२॥
पर धन और पर नारि निरख कर मन ललचाना ना चाहिये।
अष्ट प्रकार त्याग मैथुन को ईश्वर गुण गाना चाहिये॥
सत्य बात कहने सुनने में कभी न शर्माना चाहिये।
दुष्ट संग से बचे सदा सत्संग में जाना चाहिये।
करे अतिथि सत्कार वस्त्र भोजन से बड़ों की सेवकाई ३॥
करे धर्म से धन का संचय चाहे जो रोजगार करे।
तन मन धन और वचन कर्म से एक का एक सुधार करे
कटु वचन ना कहे किसी से परहित पर उपकार करे।

सत्य विद्या सीखे सिखलावे सदा सत्य व्यवहार करे ॥
वेद शास्त्र से ऋषि मुनियों ने सुर पद रीति यह बतलाई ।४
मनुष्य मात्र का धर्म वेद में परमेश्वर ने बतलाया ।
यही आज संक्षेप रीति से लघु मति मैंने गाया ॥
करो करो करतव्य मनुष्य का मिले न फिर नर की काया।
अवसर दुर्लभ वृथा जात है बड़े पुण्य से जो पाया ॥
खोल नयन सुख चैनहिये के अब तो चेतो चितलाई ॥५

शब्द ७४

दोहा०—धीरे धीरे रे मना धीरे सब कुछ होय ॥
माली सींचे केवड़ा ऋतु आवे फल होय॥
रे भूले मन धीरी क्यों न धरे ।टेक॥
अजगर पड़ी धरण में लोटे वो भी पेट भरे।
अललपंख वो भारी योधा दिन भरभूख मरे ॥१॥
कबहुं बूंद गगन मेंदरसे कबहुं तलाब भरे।
कबहूं पत्थर तिरते देखे लोढे डूब मरे ॥२॥
मंजारी सुत आवा में राखे शिर पे अग्न जरे।
खम्भफार हिरणाकुश मारे नृसिंह रूप धरे॥३॥
नरसी के प्रभु गिरधर नागर आकर भात भरे ॥

शब्द ७५

दोहा--घर में घर दिखलाय दे सो गुरु चतुर सुजान।

पांच शब्द धुनकर धुन्ध बाजैं शब्द निशान ॥

सत्गुरु आवो हमारे गेह रे । टेक

सब कोई कहैं तुम्हारी नारी मोको अति संदेह रे ।

एक मेक होय सेज न सोवे तब लग कैसा सनेह रे । २

रात दिवस मोय नींद न आवे नयनन बरसे मेह रे ३

कहत कबीर सुनो भाई साधो हरि चरणन से नेह रे ।

शब्द ७६

साधो अब ना लगेगा थारा दाव रे । टेक

जागत् असुर ये सोवत नाहीं तुम रे मन में बड़ा चावरे ॥१

अब के लौट बगद घर जावो फेर लौट तुम आवो रे॥१॥

रिम झिम रिम झिम ज्योति झलके मनमें समझ समावो रे॥१

कहत कबीर सुनो भाइ साधो आवा गमन नसावोरे ॥१

शब्द ७७

पानी में मीन पियासी मोय सुन सुन आवे हांसी टेक

जल थल सागर पूर रहा है भटकत फिरे उदासी ॥ १ ॥

आतम ज्ञान बिना नर भटके कोई मथुरा कोई काशी ॥ २

गङ्गा जाय गोदावरी कानी भक्ति बिना सब नाशी॥ ३ ॥

कहत कबीर सुनो भाई साधो सहज मिले अविनाशी॥ ४॥

शब्द ७८

दोहा–बहुत गई थोड़ी रही, नारायण अब चेत ।

काल चिरैया चुग रही, निश दिन आयु खेत ॥
सुमरण कर श्री राम नाम, दिन नीके बीते जाते हैं
तज विषय भोग और सभी काम, तेरे संगना चलेसी एकदाम।
समझो इस को सुबह शाम जो देते हैं सो पाते हैं ॥१॥
कौन तुम्हारा कुटुम्बपरिवारा, किसकेहो यहांकौनतुम्हारा
किस के बल हरि नाम विसारा, सब जीते जी के नाते हैं।२।
लख चौरासी भरम के आया, बड़े भाग्य मानुष तन पाया।
ता पर भी नहीं करी कमाई, फिर पीछे पछताते हैं ॥३॥
जो तू लागे विषय विलासा, मूरख फंसे मौज की फांसा।
क्या देखे श्वासन की आशा, गये फेर नहीं आते हैं ॥४

शब्द ७९

रङ्गमहल के बीच पुरुष मतवाला है। टेक
उलटे प्राण गर्भ में डारे,
अलख पुरुष का खेल भरम से न्यारा है।
गगन मण्डल में अमी रस भरिया,
नुगरा प्यासा जोय हिये अन्धियारा है।
पांच आत्मा अपनी सारो नागन का फन उलटा मारो,
मेरु दण्ड को शोध पवन दुधारा हैं।

शब्द ८०

मेरी चुनरी के लाग्यो दाग पिया। टेक

धोवत फिरूं दाग नहीं छूटे मन मूरख अभिमान किया।१
महंगे मोल की मेरी आई जुनरियां तन मन धन कुर्बान किया।
सत्गुरु धोबिया मिले सहज में दाग ज़िगर का साफ किया
जग मग जग मग करे चुनरिया कोटिभानु प्रकोश किया।

शब्द ७१

जुगलिया चाम की जामे बोले रमता राम। टेक
चाम ही का ऊंटड़ा चाम का नक्कारा।
चाम ऊपर चाम बैठा चाम बजावन हारा ॥१॥
चाम ही की गावड़ी चाम ही का बछड़ा।
चाम नीचे चाम ऊचे चाम दुहावन हारा ॥२॥
चाम की धर्तली चाम ही का आकाश।
चामही के नौलख तारे जिनमें है प्रकाश ॥३॥
कहैं रहदास सुनो भाई साधो कौन चाम से न्यारा
जो इस चाम से न्यारा कहिये सोही गुरु हमारा ॥४॥

शब्द ७२

तुम को मेरी लाज रघुवर। टेक
सदा २ मैं शरण तुम्हारी तुम हो गरीब नवाज़ ॥१॥
पतित उधारण विरद तिहारो श्रवण सुनो हो अवाज़।२
हो तो पतित पुरातन कहियो मार उतारो जहाज़ ॥३॥

अघ खंडन दुख भंजन जन के यही तिहारो काज ।४।
तुलसीदास पर किरपा करीयो भक्ति दान दो आज ।५।

शब्द ८३

तुम पलक उघारो दीनानाथ, मैं हजिर नाजिर कब की खड़ी
साऊ सो तो दुश्मन हो गये लागूं कड़ी कड़ी ।
तुम बिन मेरा कोई नहीं है तुम बिन नैया मेरी अटक रही
तन की हूल बदन में लागे सूकूं खड़ी खड़ी ।
पल २ होगई वर्ष बराबर मुश्किल होरही मैंने घड़ी घड़ी
हार हमेल सभी सुख त्यागे मोतियन तजी लड़ी ।
ज्ञानवाण हिरदे में लाग्या प्रेम कटारी हिय रड़क रही
किया करम मेरे सन्मुख होगया धुरकी कलम अड़ीं ॥
बार बार मीरां बाई गावे,

शब्द ८४

धन हो साहिब मैंने आजकी घड़ी ॥ ४ ॥
दोहा–साहेब से सब होत होत है बंदे से कुछ नांह ।
राई ते पर्वत करे पर्वत राई मांह ॥
साधो राम करे सोई होय रे । टेक
परचा पछवा पवन चलत हैं असुर रह्यो है सोयरे ॥ १॥
तोरा या गढ़ को भीतर आवो बंधी धरी हैं दोयरे ॥२

सब जग अपने धन्धे में लागे तुम्हें न देखे कोयरे ॥३
कहैं कबीर सुनो भाई साधो लखे निरन्तर जोयरे ॥४

शब्द ८५

हरी भज २ जन्म सुधर जाय कर्म कोट की कटे फांसी टेक
तीरथ बरत धरम सब मनके क्या मथुरा भाई क्या काशी।
भटक फिरे खाली रह जायगा अन्त समय यमकी हो फांसी
गम दिपक और तेल ग़रीबी श्रुति की बाती लाखासी ।
ज्ञान चांदना हुआ मन्दर में दरस्यो पूरण अविनाशी ।२
पूरण ब्रह्म सकल घट वासी क्या जोगी क्या सन्यासी ।
घर बाहिर जद है दर दर में सांचा साहिब अविनाशी।
साध संत मिल सौदा करले भक्ति भाव ना है हांसी ।
पीपा संत शरण सतगुरु की अगम महल के हैं वासी ।४

शब्द ८६

दोहा – ऊंचा तरवर गगन फल विरला पक्षी खाय ।
इस फल को तो वो भखे जीवत ही मर जाय । १
जब लग आश शरीर की निर्भय भया न जाय ।।१
काया माया मन तजे चौरे रहै बजाय ।। २
कबीरा प्रेम रस खिन पिया, अंतरगत लौ लाय।
दिल देश में रम रहा और अमल क्या खाय ।

शब्द ८७

कोई पीवै रामरस प्यासा रे । टेक

गगन मंडल में अमृत बरषे पीलो सांसम सांसा रे।
ऐसा महंगा कभी बिकत है छै रति बारह मांसा रे
जो पीवै सो जुग जुग जीवे कबहुं न होत विनाशा रे॥
इस रस कारण हूए नृप जोगी छोड़े भोग बिलासा रे।
गोविचन्द भर्थरी रसिया और कबीर रहदासा रे।
गुरुदादू प्रसाद कछु उनके पीयो सुन्दरदासा रे॥

शब्द ८८

दोहा– मोमें तोमें सर्व में जित देखूं तितराम।
राम बिना छिन एक ही सरे न एकहु काम॥

घट घट में पक्षी है बोलता । टेक

आप ही डंडी आप तराजू आप ही बैठा है तोलता ॥१
आप ही माली आप बगीचा आप ही कलियां है तोड़ता
सब में सब पल आप विराजे जड़ चेतनमें है डोलता ३
कहत कबीर सुनो भाई साधो मन की घुंडी है खोलता

शब्द ८९

मेरे सैंयां डिगर गये मैं ना लड़ी थी । टेक

इस कायाके दश दरवाजे

ना जानूं, कौनसी खिड़की खुली थी॥ १
पांच जिठनियां दश दौरनियां,
नाजानूं इन में से कौनसी लड़ी थी॥ २
ना मैं बोली ना मैं चाली,
ओढ़े दुप्टा सोई पड़ी थी॥ ३।
कहैं कमाली कबीर की बाली,
इस ब्याही से मैं क्वारी भली थी॥ ४॥

शब्द ९०

छोड़ो लंगर मोरी बैयां गहोना। टेक
मैं तो नार पराये घर की मेरे भरोसे गोपाल रहो ना
जो तुम मेरी बैंया गहत हो,
नयना मिला मेरे प्राण हरोना॥ २॥
बृन्दाबन की कुंजगलिन में,
रीत छोड़ अनरीत करो ना। ३
मीरां के प्रभु गिरधर नागर,
चरण कमल चित टारो टरैना॥ ४

शब्द ९१

कछु लेना न देना मगन रहना। टेक
पांच तत्व का बना पींजरा जामे बोलै है मेरी मैना॥ १॥

गहरी नदिया नाव पुरानी खेवटिया से मिले रहना ॥
तेरी पिया तेरे घट में बसत है सखी खोल कर देखो नैना ॥
कहैं कबीर सुनो भाई साधो गुर के चरण में लिपट रहना ॥

शब्द ९२

दोहा—ज्यों एक ही शिला मध्यप्रतिमा विविध प्रकार ॥
कहैं कबीर त्योंही बसे ब्रह्म मध्य संसार ॥

अजि एजि साधो एक रूप सब माहीं ।
दूजा कर्म धर्म है कृत्रिम ज्यों दर्पण पर छाईं ॥ टेक
जल तरङ्ग ज्यों जल से उपजे फिर जल माहिं रहाईं ।
काया छाया पांचतत्व की विनशे कहा बताईं ॥ १ ॥
वही ब्रह्मा वही विष्णु महादेव सब देवनपति साईं ।
रूपों में सब रूप धरे है बिन गुरु दरशे नाहीं ॥ २ ॥
घट में बसे लखे कोई थोरा माया जाल भ्रमाईं ।
जब सतगुरु की किरपा होवे भेद भाव मिट जाईं ॥ ३
सब जीवन संग वैर छोड़ मत निन्दा करे पराईं ।
कहत कबीर जगत सब मिथ्या ज्यों सपना रहे नाहीं ॥

शब्द ९३

दोहा—पावक रूपी राम है, घट घट रहा समाय ।
चित चकमक लागे नहीं, धूंवा हो रहजाय ॥

म्हारे प्रेम विरह के बाण लगैंगे काहू हरिजन के ॥ टेक
माया वस होरहा अज्ञानी जिनके सतगुरु लगे नहीं कानी
चुवक चुवक रह जाय ह्योड़ा जैसे घन के ॥ म्हारे० १
धन संपति में फिरत भुलाया गुरु का शब्द नहीं चितलाया
अन्त समय पछताय नर्क में जब लटके ॥ २ ॥ म्हारे०
बिरही को तो बिरही जाने बेदरदी नहीं पीड़ पिछाने
फटा कलेजा जाय बींध गया सब तन के ॥ ३ म्हारे०
जो दीखे सो रूप हमारा अलख लखे सोही लखने हारा
रूम रूम के बीच एक हुआ हरि चमके ॥ ४ ॥ म्हारे०
शुद्ध सच्चिदानन्द समाया ओंकार घन ध्यान लगाया।
परमानन्द प्रकाश हुआ गया भ्रम नशके ॥ म्हारे०

शब्द ९४

दोहा-सभी खिलोनाखांड मध्य खांड खिलोने मांह।
ऐसे सब जग ब्रह्म में ब्रह्म जगत के मांह ॥
कर महलों में दर्श महल में प्यारा है। टेक
मूल कमल पद चिन्ह बखानो कलंक आप लाल रङ्ग मानो
देव गणेश तहां रोज ठाणो ऋद्धि सिद्धि चंवर ढुलारा है
स्वाद चक्र षट् दल विस्तारो ब्रह्मा सावित्री रूप निहारो
दलह नागिनी का शिर मारो तहाँ शब्द ओ३म् कारा है
नाभी अष्ठकमल दल राजा श्वेत सिंहासन विष्णु विराजा

हिरङ्ग आप तासु मुख सामा लहनो शिव आधारा है
द्वादश कमल हृदय के मांही कनक गुरु शिव ध्यान लगाई
सोहं शब्द तहां धुनि छाई गण करें जय जय कारा है ॥
दो दल कमल कण्ठ के मांही ता मध्य बसे अविद्या माई
हरी हर ब्रह्मा चंवर डुलाई जहां शर्र नाम उचारा है
तापर कंज कमल है भाई बक भौंरा दो रूप दिखाई।
निज मन करो जहां ठकुराई सो नयनन जिखवारा है ॥
कमलन भेद कहा निरवारा यह रचना सब पिण्ड मंझारा
सत सङ्गत कर गुरु शिर धारा वहां सत्य नाम उचारा है ॥

शब्द ९५

दोहा—धमा फड़की सुन्न में बाजे अनहद तूर।
तकिया है मैदान में पहुंचेगा कोई ॥
गगन मण्डल में जो जन जाकर सुने बेहद अनहद बानो।
सातों रङ्ग निरखता यहां पर हो जावे पूरण ज्ञानो॥टेक॥
श्याम पुतलियों बदल आंख की रूप रंग देखो सारे।
सप्त ऋषियों न सात घाट पर भिन्न २ आसन मारे॥
जिस में बाना सहस्र कमल का तीन लोक यहां विस्तारे
अनिता सविता देव सबन के इष्ट रूप सातों धारे॥
घूं घूं घैंकुला झाल समध की घंटा शंख बजें न्यारे।
धूम लोहार गगन में चंचिपल ज्योति जरें नौलख तारे

पांच कमल के बीच कुण्डलिनी सहज २ ही फुंकारे।
मेरुदण्ड से सीधा होकर तोड़ दिये नभ के तारे॥
तीन लोक की रचना यहां से भई सुरति यहां दीवानी।
सातों रङ्ग निरखता यहांपर होजावे पूरण ज्ञानी॥१
दर्शन यहां तिरलोक पती के पावो मन में हर्षावो।
सूची अग्र छिद्र में होकर बंक नाल में घुस जावो॥
तिरछा मारग बंक नाल का बिन सत्गुरु कुछ नहिं पावा
ऊंचा नीचा ऊंचा होकर त्रय मण्डल पर चढ़ जावो॥
प्रत्याहार धारणा धारो सिमट बीच सुखमन आवो।
पीपी पपीहा ऊपर बोल्यो कूर्म बन कर छिप जावो।
और मरे सब जग का मरना तुम जीते जी मर जावो
भृङ्गी गुरु का शब्द सुनो तुम चरण गुरू के चित लावो॥
तन मन सौंपो अपना उनको हो जावो सर्वस्व दानी।
सातों रङ्ग निरखता यहांपर हो जावो पूरण ज्ञानी॥२
यह ब्रह्माण्ड फोड अण्डे से त्रिकुटी का मण्डल साजा
योजन लक्ष लक्ष का घेरा सरे जीव का सब काजा।
हास्य बिलास यहां पर अद्भुत ओ३म् ओ३म् हूहू का जा
रस का उठे सरूर यहां पर अनहद का बादल गाजा।
ज्ञान विज्ञान हुए यहां से जब मोह जाल टूटा तागा॥
गङ्गा यमुना और सरस्वती इनके भीतर तू आजा।

अमृत रस में न्हा कर यहां पर विश्वनाथ दर्शन पाता
योजन कोटि सुरत फिर जाकर दशों शून्य में मग नानी
सातों रङ्ग निरखता यहां पर हो जावे पूरण ज्ञानी ॥३॥
द्वादश गुण प्रकाश यहां का त्रिकुटी से शून्य में आई ।
रूपवंत देवों से मिल कर सिंधु सरोवर जा न्हाई ॥
महा शून्य की छवि को कोई कहो सके कैसे गाई ।
मान सरोवर अमृत धारा आनन्द की नदियां पाई ॥
स्वर्गी सितार बजे हैं बाजे श्रुति शब्द में ठहराई ।
बसु मरुत वहां बास करें हैं कहा कहूं सुन्दरताई ॥
अग्नि चन्द्र समान मुखों से मंद मंद ही मुसकाई ।
आयु षोड़श वर्ष सबन की ऐसी हो अबला पाई ॥
सूर्य कान्त की भूमि बनी वहां अमृत रस बरसे पानी।
सातों रङ्ग निरखता यहां पर हो जावे पूरण ज्ञानी ॥४॥
रिम झिम रिम झिम ज्योति झलके उठे प्रेम की लहर घनी
बाग़ बग़ीचे अमर फलों के लालों की वहां सड़क बनी ॥
अमी सरोवर बाग़ बाग़ में तट उनका पारस की मणी ।
कैसे शोभा कहूं यहां की सब कुछ जाने आप धनी ॥
स्वयं प्रकाश रूप को लेकर सुरति फिर आगे को चली
योजन अरब गई ऊपर को आगे मिल गइ प्रेम गली।
दशों दिशा में घोर अंधेरा मगन भई नहीं छली बली ॥

योजन खरब गई नीचे को यहां से देखो सैर भली।
इस हद में दस नील अंधेरा यहां से सुरति उलटानी।
सातों रङ्ग निरखता यहां पर हो जावे पूरण ज्ञानी॥
योजन खरब गई नीचे को थाह यहां का नहीं पाई।
पर सतगुरु का ध्यान सुरति यो उलट गगन पर चढ़ी आई।
महा शून्य से आगे आकर मिता Sमिता नदियां खाई॥
मण्डल चारि पुरुष दर देखा भंवर गुफा झूली जाई॥
एक हिंडोला, यहां पर अद्भुत झूल रहे मुनिवर राई
इड़ा पिङ्गला रज्जु करके सुषमन की पटली लाई॥
कुंडली कालकूट अग्र खींचा धींग गगन झोका खाई।
पारा पश्यति और मध्यमा सखियों ने वाणी गाई॥
अनहद घोर घटा बिन बंसीवर से मधुरी मन मानी।
सातों रंग निरखता यहां पर हो जावे पूरण ज्ञानी॥
गोपी मधुरी वाणी गावें बंसी बजावें नन्द कुमार।
एक एक गोपी सग मिल कर सोऽहं स ऽहं रहे उचार
हियरा से हियरा मिलि बैठे आनन्द की कोकरैं सुमार?
और देव की गम नहीं यहां पर महादेव लइ मन में धार
गोपी बन कर मिले गले से चरणों से गल धैयां डार
एक हो गये स्वयं रूप में नयनों से नयनों की धार॥
गङ्गा यमुनर अचल हो गई ऐसो अद्भुत कियो विहार

छद्द साध्य तुमो एक हो गवे ताही खानी अगम अपार
नाका टूटा सत्य लोक का उड़ गये हुसा कैलानी
सातों रङ्ग निरखते यहां पर हो जावे पूरख ज्ञानी ॥७॥
ज्योति हंस यहां बास करें हैं सूक्ष्म चेतन्यहो दर्शाया।
जड़ स्थूल नहीं है यहां न-ईवर यहां पर काया माया ॥
प्रेम दिवानी हुई यहां पर सत्य २ आपा दाया।
हक्क २ धुनि सुनके ध्योन को फिर आपे में मगनाया ॥
रूप स्वरूपा नदिया यहां पर सोना रूपो जलछाया।
बन उपवन है यहां पे अद्भुत कं टो चार इनकी छाया ॥
कोटिन सूरज चांद समाना पहुप दृक्ष पर लगि आया।
परम हंस यहां ब स करें है एक भुसुंड काग पाया ॥
रस दस के खीकारे यहां पर हंस करें मधुरी बानी।
सातों रंग निरखता यहां पर हो जावे पूरख ज्ञानी ॥८॥
सत्य पुरुष का दर्शन कीया क्या बरणों सुन्दरताई।
कोटिन सूर्य्य चांद देख लो एक रोम से शर्माई ॥
पद्म त्रिलोक बराबर उनकी खिली सेज सुख को पाई।
जाकर सोई पिया संग अपने सुध बुध अपनी बिसराई।
संत कहें अब अलख लोक की महिमा और उत्तम गाई।
भरबन खरबन ज्योति चमके कोट अंस को मलूकाई ॥
अगम लोक की गम नहीं मुझ को गूंगे ने मिसुरी खाई।

परमानंद गुरु चरणों पर कोट कोट ही बल जाई ॥
गुरु मिला आपा जब मेटा श्रुति शब्द में मगनानी ।
सातों रङ्ग निरखता यहां पर हो जावे पूरण ज्ञानी ॥९॥

शब्द ९६

दोहा—लग्न लग्न सभी कहैं लग्न कहावे सोय ।
नारायण जा लग्न में तन मन दीजे खोय ।
लग्न बिन जागे ना निर्मोही ॥टेक॥
बिना लग्न की प्रीति बावरे ओस नीर ज्यों धोई ॥१
हमतो रहते राम भरोसे रजा करे सोई होई ॥२॥
बिन कृपा सत गुरु नहीं पावे लाख जतन करो कोई ॥
कहैं कबीर सुनो भाई साधो गुरु बिनमुक्ति न होई ॥

शब्द ९७

दोहा— माला जपूं न कर जपूं मुख से कहूं न राम ।
मन मेरा सुमरण करे कर पाया बिसराम ॥
हर दमतसबी ने फेर भाई तेरे अन्दर अमोला लाल ॥ टेक
बिन तागे यह तस बी पोई बिना सार का बीज ।
अंदर सुमरणी एक न फेरीरहा काट पे रीझ ॥ १ ॥
मरजा जिकर मिटे सब तेरा मर के तेरा जीव ।
लाख दुहाई तैंने तेरा सतगुरु कीतेरे में तेरापीव ॥ २ ॥

एक हजार छैसं। से बीसरे चांद सूरज के बीच।
नौ दरवाजे बध कर राखे दश में वसे जग दीश ॥४॥
पहले आपा खोजिये फिर मुंडाइये मूंड ॥
इधर उधर को क्या ढूंढ़े है इसी ढूंढ़ में ढूंढ़ ॥ ४ ॥
मौजी साध बंदगी वाको जिन गुरु दियो उपदेश ।
कल्लर स्याह ने सैन लखाई दिल अन्दर दरवेश ॥५

शब्द ९८

अगम नहीं गुरु बिन सूझ पड़े ॥ टेक ॥
चार वेद पढ़े पुराण अठारा नौघट खोज मरे ॥ १ ॥
ज्ञान बिना भरम नाहीं छूटा झूठा ही बाद करे
कह गुरु शब्द आकाश बांस पर श्रुति गगन चढ़े ॥ ३
तन विराट जीव तरे तुलसी सहज ही भव उतरे ॥ ३

शब्द ९९

दोहा—लोहा जैसे काठ संग, चलत फिरत जल मांह ।
बड़े न डूबत देत हैं जाकी पकरे बांह ॥
संगत तो करले साध की जासे उपजेंगे आतम ज्ञान ।
जल देखे शुची ऊपजे साधु देखे ज्ञान ॥
माया देखे लोभ ऊपजे तिरीया देखे काम ॥ १ ॥
साधु मिलन जब चालिये तज माया अभिमान ।

क्यों २ पग आगे धरे त्यों २ यज्ञ समान ॥ ॥
साधु हमारी आत्मा हम संतन की देह ।
रोम रोम में रम रहा ज्यों बादल में मेह ॥ ३
साधु माई बाप हैं साधु भाई और बन्धु ।
साधु मिलावे राम से काटैं यम के फन्द ॥ ४ ॥
एक घड़ी आधी घड़ी आधी से भी आध ।
तुलसी संगत साधु की हरै कोट अपराध ॥ ५

शब्द १००

दोहा–बैठ कुसंग चाहत कुशल तुलसी बड़ो अफसोस
महिमा घटी समुद्र की, रावण बसो पड़ोस ॥
तजोरे मन हरि विमुखन को संग ॥ टेक
जाके संग से दुर्मति उपजत है पड़त भजन में भंग ॥
क्या होत काग कपूर चुगाये श्वान नुहावत गंग ॥२॥
क्या होत पय पान कराये विष नहीं तजत भुजंग ॥३॥
चन्दन लेपन गधंब लाये रकंठ भूषण अंग ॥४॥
सूरदास यह काली कंवरिया चढे न दूजो रंग ॥५॥

शब्द १०१

दोहा–तुलसी रसना तो भली जो तू कहे राम ॥
नातर काट बगाइये मुख में भलो न चाम ॥२॥

हर भजले रसना (जिठहा) धाम की ॥टेक॥
राम भजन बिन कौन काम की अखिर जिह्वा तू है।
धाम की, बेचूं तो नांह छदाम की ॥१॥
ना तीर्थ न देव धाम की नित गूंगी गोविन्द नाम की
निन्दक तू है सारे ग्राम की ॥२॥
बहु स्वादन मेवा बदाम की उतर बहुरि लाडलाम की
जैसे घोड़ी बिन लगाम की ॥३॥
शंभू सखी मैं चेरी श्याम की खता बारहु आठों यामकी
खता बकसो निज गुलाम की ॥४॥

शब्द १०२

दोहा—घट में रहे सूझे नहीं करसे गहा न जाय।
मिला रहे अरु ना मिले तासु कहा बसाय ॥
एक अनेका व्यापक पूरक जित देखूं तित सोई ॥टेक॥
माया चित्र बिचित्र बिमोहित बिरला बूझत कोई॥१॥
सब गोबिंद हैं सब गोबिंद हैं गोबिंद बिन नहीं कोई।२।
सूत एक मणि सहस्र जैसे ओत प्रोत प्रभु सोई॥३॥
जल तरंग और फेन बुद बुदा जल से भिन्न न होई ॥४
यह प्रपंच पार ब्रह्म की लीला बिचरत आन न कोई॥५
मिथ्या भ्रम और स्वप्न मनोरथ सत्य पदार्थ माना॥६।
कृत मनसा गुरु उपदेशी जागत ही मन जाना ॥७॥

कहत नामदेव हरि को रचना देखो हृदय विचारी।८।।
घट २ अन्तर सर्व निरन्तर केवल एक मुरारी ।। ९ ।।

शब्द १०६

दोहा–मोहनी मूरत श्याम की हृदय रही समाय ।
लाली मेंहदी पात ज़्यों देख लखी न जाय।।
दलाली लालन को म्हारे सतगुरु दई है बताय ।।टेक।।
लाल पड़ा मैदान में कीच रहा लिपटाय ।
निगुरे निगुरे लखगये सुगरे लिया उठाय ।१।।
सब के पल्ले लाल है सब ही साहूकार ।
गांठ खोल परखा नहीं रे इस विध रहा कंगाल ।।२।।
इधर से अंधा अवता उधर से अंधा जाय।
अंधे से अंधा मिला मार्ग कौन बताय ॥३
लाली लाली सभी कहें लाली लखी न कोय ।
लाली लखी कबीर ने मुक्ति पाई सोय ।। ४ ।

शब्द १०७

दोहा - कबीरा सुन्दरी यों कहे, सुनियो कन्त सुजान
बेग मिलो तुम आय के, ना तर तजूं प्राण ।
पिया बिनसूनो छै म्हारो देश ॥ टेक ॥
ऐसा है कोई पीवे से मिलावे तन मन धन करूं पेश ।१

थारे कारण बन बन डोलूं कर जोगिन का भेष ।२ ॥
प्रीतम प्यारे दरश दिखाजा तुम बिन बहुत क्लेश । ३
अवधि बदी थी अजहुं न आये रूपा होगये केश ।.४.।
मीरां के प्रभू गिरधर नागर तज दियो नगर नरेश ॥५॥

शब्द १०८

दोहा—भली भई जो गुरु मिले, नातर होती हान ।
दीपक ज्योति पतंग ज्यों, परता आय निदान ॥
वा घर की सुध कोइ न बतावे जा घरसे जीव आया हो
ब्रह्मा विष्णु महेष नहीं थे किसने जीव बनाया हो ॥१॥
पानी पवनको दही जमाया अग्निको जामनदीना हो २
चांद सूरज दो बने अहीरा मथ के माखन काढ़ा हो ।३।
रे मनसा माया क लोभी तुझे बार२ समझाया हो ।४।
कहत कबीर सुनो भाई साधो वाह घर गुरुने लखाया हो

शब्द १०९

दोहा—पपीहा प्रण कबहुं न तजे, तजे तो मन बे काज
तन छूटे तो कुछ नहीं, प्रण छूटे तो लाज ॥
आज जो मैं हरि है न शस्त्र गहाऊं ।
तो लाजूं गंगा जननी को सांतनु सुत न कहाऊं ॥टेक।
स्यन्दन खंड सारथी खंडु कपीध्वज सहित गिराऊं ॥१॥

पांडू दल सन्मुख व्हैधाऊं सरिता रुधिर बहाऊं ।।२।।
इतनी न करूं शपथ मोहे हर को क्षत्री गती नहीं पाऊं ।३
सूर श्याम रण भूमी विजय बिन जीवित न पीठ दिखाऊं

शब्द ११०

दोहा–भूले थे संसार में, माया के संग आय ।
सतगुरु राह बताइयां, फिर मिलेंगे आय ॥
माया हो रंग बादली जामें चन्दा हो दरशे नांह ।टेक
काया में माया बसे ज्यों पत्थर में आग ।
जो तेरी सुरता हरि मिलनको चकमक होकर लाग ।।१।
चोर चुराई तूबरी जल में डूबे नांह ।
वो डुबोवे वह ऊबरे करनी छानी नांह ।।माया २।।
काम क्रोध के बने दरवा गर्ज रहा अहंकार ।
आशा तृष्णा के मेंं बीजली भीजरहा संसार ।।३।।
ज्ञान पवन जब से चली सब बादल दिये उड़ाय ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो चन्दा हो दर्शे आय ।।४।।

शब्द १११

दोहा–श्वासों की कर सुमरनी, अजपा को कर जाप ।
ब्रह्म तत्व का ध्यान धर, सोऽहं आपे आप ॥
अजपा जाप जपो भाई साधो श्वासों की करलो माला

मेरे राम ॥ टेक ॥

हाथसुमरनी बगल कतरनी यह क्या रचदियो चाला ।
लोगोंके भावें भगती कमावे साहेबके मुख काला । मेरेराम
जब लग दरशे ना सच्चा साईं होवे ना घट उजियाला ।
बिन सतगुरु ताली नहीं लागे खुले न भ्रम का तालार ॥
मन का मनिया फेर प्राणी क्यों हो रहा मतवाला ।
गठड़ी खोल लाल नहीं परखा इस विध आयादिवाला
साध सन्त की सेवा कीजे सन्तों का देश निराला ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो निर्गुणपीलो प्याला ॥ ४

शब्द ११२

दोहा—पपीहा प्रण कबहुं न तजे तजे सो तन बे काज
तन छूटे तो कुछ नहीं प्रण छूटे तो लाज ॥
अजि ऐसी साधो सहज समाधी भली ।
गुरु प्रताप भयो जा दिन से सुत अनन्त चली ॥ टेक ॥
आंखन मूंदू कानन रूंधूं काया कष्ट न धरूं ।
खुले नयन मैं हंस हंस देखूं सुन्दर रूप निहारूं ॥१॥
कहूं सो नाम सुनूं सो सुमरण खाऊं पिऊ सो पूजा ।
गृह उद्यान एक सम जानो भाव मिटाया दूजा ॥२॥
जहां जहां जाऊं सो परिकरमा जो कुछ करूं सो सेवा ॥

जब सोऊं तो करूं दण्डवत पूजूं और न देवा ॥३॥
कहै कबीर यह उनमन रहनो सो प्रगट कर गाई ।
सुख दुख से इक परे प्रेम सुख जेहो सुख रहो समाई ॥

शब्द ११३

तनक हरी चितवो मेरी ओर ॥टेक॥
खड़ी खड़ी मैं अरज करत हूं अर्ज करत भई भोर ॥१॥
तुम से हम को नाहीं मिलेंगे हमसी लाख करोर ॥२॥
बन माहीं व्याकुल भई डोलूं ढूंढ़ फिरी चहुं ओर ॥३॥
मीरां के प्रभु कब जो मिलोगे सुन्दर प्रीतम मोर ॥४॥

शब्द ११४

चल गगन मण्डल के बीच जहां तेरा पिया सजनी ॥टेक
वहां एक आवे एक जाय वाके सग क्यों न चली ॥१॥
जहां झिलमिल २ होय खिल रही चम्पा की कली॥२॥
तुम चढो छमाछम जाय पिया की सुखमन सेज बिछी ३
मिल एक रूप होजाय दुई सब तुरत नसी ॥४॥
यों कहते नाथ गुलाब मुकत की यही है गली ॥५॥
गुण गांवे भानीनाथ पिया से जाकर मिली ॥६॥

शब्द ११५

चले गये दिल के दामन गीर ॥टेक॥

जब सुध आवे तुमरे दरश की उठें कलेजे पीर ॥१॥
नट वर भेष नयन रतनारे सुन्दर श्याम शरीर ॥२॥
वृन्दाबन बंशीवट त्यागो निर्मल जमना नीर ॥३॥
आप ही जाय द्वारका छाई खारी नद के तीर ॥४॥
सब गोपीयन का नेह बिसारो ऐसे भये बेपीर ॥५॥
सूरदास ललिता उठ बोली आखिर जात अहिर ॥६॥

शब्द ११६

दोहा-राजा राना राव रंक बड़ा जो सुमरे नाम ।
कहे कबीर सब में बड़ा जो सुमरे निष्काम ॥
तू सुमरण करले मेरे मना तेरी बीती,
जात उमर हरि नाम बिना,
पंछी पंख विन हस्ती दन्त बिन नारी पुरुष बिना ।
जैसे पंडित वेद विहीना तैसे प्राणी हरी नाम बिना ॥१।
देह नयन बिन रैन चन्द्र बिन धरणी मेघ बिना ।
जैसे पुत्र पिता बिन हीना तैसे प्राणी हरि नाम बिना॥२।
कूप नीर बिन धनुष वीर बिन मंदिर दीपक बिना ।
जैसे हृदय ज्ञान विहीना तैसे प्राणी हरीनाम बिना ।३
काम क्रोध मद लोभ निवारो त्यागो मोह तुम सन्त जना।
कहें नानक सुनो भगवन्ता या जग में नहीं कोई अपना

शब्द ११७

दोहा–जो ऊगे सो आथवे, फूले सो कुमलाय ।
जो चिनिये सो ढै पड़े, जामें सो मर जाय ॥

चरखा हालम लागा सारा तैंने कैसो खराद उतारा ।
कारीगर जहां घड़ने बैठा वहां घोर अँधियारा ।
वे औंजार साल सब कीने अंजा ठीक समारा ॥१॥
नो दस मास में घड़ कर देता ना कुछ चेत विचारा ।
बहत्तर जिसमें छेकी कठरी बीच रखा गलियारा ॥२॥
टोक ठाक तियार किया जब पृथ्वी बीच उतार ।
चरखे वालों के मन भाया सब को लागा प्यारा ॥४॥
अन्त समय चरखे को आई आया हुकम करारा ।
माधोदास कहत कर जोरा होगया न्यार न्तारा ॥४॥
एक शब्द गुरु देव का जाका अनन्त विचारा ।
पंडित और मुनि जन थके ठेदन पाया पार ।

शब्द ११८

दोहा–एक शब्द गुरु देव का जाका अनन्त विचार ।
पंडित थाके मुनि जना वेद न पावे पार ॥

सुनो भाई साधो अक्षर पद का विचार ॥टेक॥
निहग पद शिव रूप निरंजन निर्विकल्प निश्चय भवभंजन

अमर अमर अज निर्गुण निर्मल निर्विशय निराधार ।१
विभु अनन्त अद्वैत अविनाशी पुरुषोत्तम स्वतः त्र दुखराशी
स्वयं प्रकश असंग अनादि निष्क्रिय और निराकार ।२
पूरण ब्रह्म नन्तं अनूपा अप्रमेय अव्यक्त अनूपा ।
निर्विकार निरवयव सनातन अगम अखण्ड अपार ॥३॥

शब्द ११९

दोहा—कबीरा करनी आपनी, कबहुं न निष्फल जाय ।
सात समुद्र आड़े पड़े, मिले अगाऊ आय ॥
कर ले मन मेरा जो कुछ करना होय ॥ टेक
काल करे सो आज कर जो कुछ करना होय ।
अवसर चूके मौसर नाहीं पीछे झुरना होय ॥
यथा तू फिरे मग्न मन अपने जंगल हिरना होय ।
भवर फंसा चौकड़ी सारी भूला ही भरना होय ॥२
जोबन जोम ओस का मोती एक दिन ढलना होय ।
अपनी चलती बुरा न करिये सब दिन डरना होय ॥३
मौत निमानी खड़ी शीश पर एक दिन मरना होय ।
बांध रहा वर्षों के सामे पलकी खबर नहीं तोय ॥ ४
करले ना मन नाव राम की सत्गुरु शरना होय ॥ ५॥

शब्द १२०

सब तज भज हरि नाम प्यारे ॥ टेक

दीन दयाल कृपाल दयानिधि भक्तन के रखवारे । १
पापी पतित गीध गनका से कोटिक जन निस्तारे ।२
जहां २ भीड़ पड़ी भक्तन पर तुरत हि आप पधारे ।३
रावण कुम्भकरण से योधा महा युद्ध कर मारे ॥४

शब्द १२१

सुरता हे म्हारी धोबनिया म्हारा दाग़ जिगरका धोय ।
तनकर कूंडो मति मसाला या ही में सौण करो ।
लोभ लकरिया ठोक जराओ कुन्दी तो खूब करो ।१
समता नीर ज्ञान का साबुन सत का मावा दो ।
शील शिला पर दे फटकारो या विधि साफ करो ।२
खैंच तान कर तह बनालो गुलझिट मत राखो ।
जन्म २ के दाग़ लगे हैं अब के तो डारो याने धोय ।४

शब्द १२२

मालिक कुल आलम के हो, तुम सच्चे श्रीभगवान ।टेक
सूरज चांद पवन और पानी, धरती बीच असमान ।
सब में जलवा तेरा ही देख्यो, कुदरत पर कुरबान ।१
भारत में अर्जुन के कारण, आप बने रथवान ।
उसने अपने कुल को देखा छुट गये तीर कमान ॥२॥
ना कोई मारे ना कोई मरता, तेरा ही अज्ञान ।

आतम एक अचल अविनाशी, यह गीता को ज्ञान ॥३॥
मुझ अजिज पर कृपा कीज्यो, बन्दा अपना जान ।
मीरां माथो शरण तुम्हारी, लगा चरण से ध्यान ॥४॥

शब्द १२३

भोर भयो पक्षी गण बोले उठो अब हरीगुण गाओरे ॥१
लखि प्रभात प्रकृति की शोभा, बार बार हर्षाओ रे ।
प्रभु की दया सुमिर निज मन में, सरल स्वभाव उपजाओ रे
हो कृतज्ञ प्रेम में उनके, नैनन नीर बहाओ रे ॥४॥
ब्रह्म रूप सागर में मन को, बारम्बार डुबाओ रे ॥५॥
निर्मल शीतल लहरें लेले, आत्म ताप बुझाओ रे ॥६॥

शब्द १२४

नाथ कैसे छोड़ बैठे क्या मेरी तकसीर है ।
रो बैठूंगी प्राण अपने ऐसी मुझ पै भीड़ है ।
ऐसो थी मैं प्राण प्यरी कैद रावण के पड़ी ।
राक्षसी डरपा रही हैं ले हाथ में शमशीर है ॥
छुट गई संग की सहेली छुटा सब परिवार है ।
छुट गई चरणों की भक्ति लोट गई तकदीर है ॥
रात दिन तड़फूं पड़ी तुमरे दरश बिन हे पती ।
तुमरे आये बिन हमारी कौन बांधावे धीर है ।

मुझ को सताते हैं निशाचार अब मेरी सुध लीजिये।
दास तुलसी शरण तुमरी जन की मेटी पीर है ॥

शब्द १२५

मन पछते हैं अवसर बीते ॥ टेंक ॥
दुर्लभ देह पाय हरि भज कर्म बचन और ह्रीते।
साहस बाहु दश बदन आदि नृप बचे न काल बलीते।
हम हम कर धन धाम संवारे, अंत चले नठ रीते ॥
सुत बनितादि जान स्वार्थरथ, ना कर नेह इन्हींते ॥
अन्तहु तोहि तजेंगे पामर, तू ना तजै अब ही ते ॥
अब नहीं अनुराग आग जड़ त्यागहूं दुराशा जीते ॥
बुझै न काम अग्नि तुलसी कबहूं,
बहु विषय भोग और घीते ॥ ७ ॥

शब्द १२६

तारेंगे तहकीक सत्गुरु तारेंगे तहकीक ॥ टेक ॥
घट ही में गंगा घट ही में जमना, घट ही में जगदीश ॥१॥
तुम्हारे ज्ञाना तुम्हारे ध्याना, तुमरी तारन की परतीत ॥२
मनकर घोरा बाँधले बोरे, छाड़दे दिलकों की रीति ॥३
दास गरीब कबीर का चेला, टारे यम की रसीत ॥४॥

शब्द १२७

अरी ऐरी उदां लागी का नाम न ले ॥टेक॥
जल से प्रीति करी मछली ने बिछुरत प्राण तजे ॥१॥
मृगों को प्रीति लगी नादों से सन्मुख सेल सहे ॥२॥
दीपक से प्रीति लगी है पतंग की बार फेर जिया दे।
मीरां की प्रीति लगी है सन्तों से गुरु चरणों चित्त दे॥४॥

शब्द १२८

तुम्हारे बिना बिगरी कौन सुधारे ॥टेक।
जो एक दिन बिगरी पिता पुत्र में बांध थम्भ सें मारे।
जन अपने का काज दयानिधि, रूप नर हरि धारे ॥१॥
जो एक दिन बिगरी भ्रात भ्रात में, लात दुशासन मारे
राज पाय विभीषण फतह के, बाजत लंक नगारे ॥२॥
जो एक दिन बिगरो राज सभा में, द्रोपति दीन पुकारे
ताको अनन्त चीर बढायो, दुष्ठ दुशासन हारे ॥३॥
एक दिन बिगरी जन नरसी की, समधी जू के द्वारे।
सब भांति भात भरो है, कारज जन के सारे ॥ ॥
जब जब भीर परी भक्तन पर, तब तब कारज सारे।
अब की बार कहांजा सोवे बिपत बिहारन हारे ॥५ ॥

शब्द १२९

नाम जपन क्यों छोड़ दिया ॥ टेक ॥

क्रोध न छोड़ा झूठ न छोड़ा, सत्य बचन क्यों छोड़ दिया
झूठे जग में दिल ललचा कर असल बतन क्यों छोड़ दिया
कौड़ीकोतो खूब संभाला, लाल रत्न क्यों छोड़ दिया ।
जिहीं सुमरन ते अति सुख पावे सो सुमरन क्यों छाड़ दिया
खालिक इक भगवान भरोसे, तन मन धन क्योंन छोड़ दिय।

शब्द १३०

जन्म तेरो बातां में बीत गयो, तैंने कबहूं न नाम कह्यो
पांच बरस को आलो भोला अबतो बोस भयो ।
मकर पचीसी माया कारण, देश बिदेश गया ॥१॥
तीस बरस अब मति उपजी, लाभ बढै नित नयो ।
माया जोड़ी लाख करोड़, अजहूं न तृप्त भयो ॥२॥
वृद्ध भयो जब आलस उपज्यो, जप तप कठ रह्यो ।
साधु कीसगत कबहूं न कीनो, वृथा जन्म गयो ॥३॥
यह संसार मतलब का लोभी, झूठा ठाठ रच्यो ।
कहत कबीर समझ मन मूरख, तूं क्यों भूल गयो ॥४॥

शब्द १३१

दो० चोरी हिंसा अरु व्यभिचार, काया के त्रय दोष बिचार

निंदा अरु कटुबाद असत्य, वाणी के यह दूषण सत्य ॥
तृष्णा द्वेष बुद्धि अरु क्रोध, त्रिविध दोष मन में तू शोध
इहि प्रकार नव दूषण त्याग, कर सत्संग खुलेंगे भाग ॥

सिया रघुबीर भरोसो ऐसो ।टेक

बारी न बोरि सक्यो । प्रहलादहि पावक नांहीं जरोसो ।
गिर ऊपर ते डारि दियो है भूमि पर उबरो सो ।। १
हिरणा कुश प्रहलाद भक्त से हठ कर बैर करो सो ।
मारयो चहै दास नर हरि को, आपै दुष्ट मरोसो ॥२॥
जारो लंक अंजनो नन्दन, देखत पुर सगरो सो ।
ताके मध्य विभ षण को गृह, राम कृपा उबरो सो ।।३।
रावण सभा कठिन प्रण अंगद, हिभधरि हरि सुमरोसो
मेघनाथ सम कोटिन योधा, लागे पग न टरोसा ॥४।
गज और ग्राह लड़ें भीतर, गज को ग्राह भच्यो सो ।
गरुड़ छोड हरि प्यादे हो आये डूबत गज उधरोसो ॥५
विप्र सुदामा फिरत दुखी होय कबहू न उदर भरो सो
राम कृपा कंचन गृह पाये हय गज बाज खड़ो सो ।६॥
द्रोपद सुता को चीर दुशासन, राज सभा पकरोसो ।
खैंचत खैंचत भुजबल हारे, नेक न अंग उघरो सो ॥७॥
भारत में भंवरी के अण्डे, छोहनो दल विटरो सो ।
राम नाम जब पक्षि टेरयो, घंटा टूटि परोसो ।।८।।

मीरां के मारन के कारण घोरो ज़हर खरीसो ।
राम कृपाते अमृत ह्वैगयो, हंस २ पान करीसो ॥९॥
तुलसीदास विश्वास रामपद जो नर नरी नरीसो ।
और विभूती कहां लग बरणों जेहि यमराज हरीसो ॥१०

शब्द १३२

दोहा—जिसका कोई न होय हृदय से उसे लगावे ।
प्राणी मात्र के लिये प्रेम की ज्योति जगावे ॥
सब में प्रभु को व्याप्त जान सबको अपनावे ।
है बस ऐसा वही भक्त की पदवी पावे ॥

मुरलिया ने कियो है कठिन तप भारी । टेक
जन्मत ही ऐसी मत गाढ़ी बन में रही एक पग ठाढ़ी ।
वर्षा शीत उष्णता बाढ़ी सो सही तन पर सारी ॥
मुरली निज तप के फल लीने ब्रह्मा रुद्र इन्द्र बश कीने
चेतन ये सो जड़ कर दीने अधरन चढ़ी मुरारी ॥
एक मन्त्र विधि हरि से पावे ताते इतनो सृष्टि नचावे ।
हरि याकूं नित मन्त्र सुनावे अचरज भयो कहारी ॥
हरि हाथों नित बैन बजावे तीनलोक धुनिसुनि सुख पावे
छब्बीलाल मनावे ब्रज को बास मिले बनवारी ॥

शब्द १३३

सुना है हमने निर्बल के बल राम ॥

जब तक गज बल अपनो कीनो, सरो ना एक हु काम ।
जब गज ने हरि नाम सम्हारो, आगये आधे नाम ॥१॥
दीन होय जब द्रौपदी टेरी बसन रूप धरा श्याम ॥२॥
बहुत ही साख सुनी सन्तन की अड़े संवारे हैं काम ।
नरसी भक्त को हुन्डी पेली दिये रोकड़ी दाम ॥३॥
जप बल तप बल और भुजा बल चौथे बल हैं दाम ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो हारे के हरि नाम ॥४॥

शब्द १३४

देखोरी यो कैसो बालक रानी यशुमति जायो है । टेक
सुन्दर वरण कमल दल लोचन देखत चन्द्र लजायो है
पूरण ब्रह्म अखल अवनाशी प्रगट नन्द घर आयो है॥
मोर मुकट पीताम्बर सोहे केशर तिलक लगायो है ।
कानन कुण्डल गल बिच माला कोटि भानु छवि छायो है॥
शंख चक्र गदा पद्म विराजे चौभुज रूप दर्शायो है ।
खम्भफार प्रकटे नर हरि वपु जन प्रहलाद छुड़ायो है॥
मच्छ कच्छ बराह अरु वोमन राम रूप दर्शायो है ।

परशुराम बुद्ध निहकलंक होय भुवि का भोर मिटायो है।
काली मर्दन कंस निकन्दन गोपीनाथ कहायो है ।।
मधु सूदन माधव मुकन्द प्रभु भक्त बछल पद पायो है ।
शिवसनकादिक और ब्रह्मादिक शेष सहस्र मुख गायो है।
सा परब्रह्म प्रकट होय ब्रज में लूट २ दधि खायो है ।
परमागन्द कृष्ण मन मोहन चरण कमल चित्त लायो है

शब्द १३५

दोहा–सब से भली मधुकरी, भांत भांत का नाज ।
दावा काहु का नहीं, बिना बिलायत राज ।।
राजा राना राव रङ्क, बड़ा जो सुमरे नाम ।
कहे कबीर बड़वन बड़ा, जो सुमरे निष्काम ।।
जिस को तू नरतन मानत यह आप रूप भगवान है ।
अहंकार ने जब से घेरा कहन लगा मेरा और तेरा ।
भूल गया निज रूप अनेरा तू सर्वज्ञ सुजान है ।। १ ।।
मैं हूं देह देह है मेरी केवल यही भूल है तेरी ।
पांच तत्वकी यह तो ढेरी जान क्यों भया अजान है । २
बुरी भलो करनी जब करे है बन्धन में तभी तो पड़े है।
निष्क्रय को नहीं कुछ डर है तोहे कर्म की आन है ।।३
सत चित आनन्द भाव संभारो पांच कोश ते हो जान्यरो
नाम रूप कुछ नांहि निहारो यही तो निर्मल ज्ञान है ।४

* कथा *

रहता था एक नगर में, कोई सेठ धनवान।
संसारिक व्यवहार में, था अति चतुर सुजान ॥
सांसारिक व्यवहारिक कामों में, बुद्धि थी अत्यन्त प्रबल।
था धन उसके घर में इतना, जितना अथाह सागर में जल ॥
सुत धन दारादिक सारी, सामग्री में था सेठ कुशल।
तो भी अशान्ति थी चित में, वानर की तरह था मन चंचल ॥
ऐसा था वह सेठ, मोह में फांसा हुआ पर।
पूत्र पून्य बल से, प्रकाशमय था उस का घर ॥
सुत दारा तो, दोनों थे उसके अज्ञानी।
किन्तु सुत वधु थी, पतिव्रता सती सयानी ॥
एक पुत्र वधु उसके घर में, विदुषी थी और सब गुण खानी थी॥
आत्मा में अपने स्थित थी, और योगनी भी थी और थी ज्ञानी ॥
वह विविध प्रकार युक्तियों से, दृष्टान्त सुनाया करती थी।
कल्याण कारणी वाणी में सब को समझाया करती थी ॥
निज पति पे और निज सासु पर उसने प्रभाव अपना डाला।
पर नहीं श्वसुर के हृदय में, कुछ हुआ ज्ञान का उजियाला ॥
वह माया रूपी मदिरा को पीकर उनमत्त रहा करता।
घर का धन को देख देख कर, हरदम मस्त रहा करता ॥
जिसने मन रूपी दर्पण में 'लक्ष्मी का बिम्ब उतारा हो।
ऐसे अज्ञानी प्राणी का उपदेश से क्या निस्तारा हो ॥

एक दिवस की बात है सुनिये चित्त लगाय।
पुत्र वधु निज भवन में भोजन रही बनाय ॥

छत्तीस प्रकार के व्यञ्जन थे उस की रसोई में धरे हुवे।
और शुद्ध स्वच्छ सब पात्रों में सारे भोजन थे भरे हुवे॥
वह शीलवती सुन्दर नारी श्रद्धा से भोजन बना रही।
और थाल थालियों में उत्तम व्यञ्जन रख कर सजा रही॥
उस समय सेठ के मन्दिर में, आये एक बाल ब्रह्मचारी।
और क्षुधा निवृति के कारण, आकर बोले जय कृष्ण हरी॥
यह शब्द सुना नारी ने, तब दृष्टि साधु पर डाली।
उसकी नूरानी सूरत पर, देखी ऐक तेजमयी लाली॥
उस योगी राज के चेहरे पर, कुछ अजब प्रकाश झलकता था।
उसका सुर्खीमायल चेहरा, सूरज की तरह दमकता था॥
वह देवी भा थी बड़ी चतुर, उस साधु को पहचान गई।
यह महात्मा कोई ज्ञानी है, बस इतना मन में जान गई॥
जौहरी के सन्मुख आकर के, नहीं लाल छिपाये छिपता है।
परखनेवाले के हाथों में आकरके, फिर धनका मोल निखरता है

योगीराज को प्रथम तो, झुक कर किया प्रणाम।
पुनः इसतरह पर लगी कहने, सुन्दर बाम॥
अहो किस लिये की कृपा हम पर हे मुनिराज।
और फिर इतने जल्दी कैसे पहुंचे आज॥

नीची नजरों से मुसकरा कर यों मुनिराज ने फरमाया।
भोजन की इच्छा से माता यह देह यहां चलकर आया॥
और शीघ्रयहां आने का हम तुमको क्या कारण बतलावें।
इस काल की अद्भुत गति देखी देवता न इसकी थाह पावें॥
सारा संसार असार है यह क्षण में कुछ है क्षण में कुछ है।
एक बाज़ीगर का खेल सा है क्षण में कुछ है क्षण में कुछ है॥
इसलिए जगत में हे माता एक पल का नहीं भरोसा है।

जो कुछ करना है आज ही कर यह कौन कहे कल को क्या है॥
योगीराज की बातों सुन कर अति गम्भीर।
शुद्ध स्वरूपा नारि के बहा नयन से नीर॥
वह उन साधू से फिर बोली यह आप सत्य फरमाते हैं।
ऋषिराज किन्तु इस घर में तो सब बासी भोजन खाते हैं॥
और यही फिक्र नित रहता है देखिये यह कब तक खायेंगे।
ये जमा किये कल के टुकड़े कबतलक काम में आवेंगे॥
सुन कर नारी के वचन ऋषि हुए बेताब (व्यग्र)॥
प्रत्युत्तर में इसतरह कहने लगे शिताब (जल्दी)।
हे माता तेरी उमर है क्या और पति तेरा कै साल का है?
और सास श्वसुर की भी बतलादे तू आयु क्या है?
तेरी बातों के सुनने से मेरे मन को अति कष्ट हुआ।
अब भोजन नहीं करूंगा मैं बातों से ही सन्तुष्ट हुआ॥
मृगनयनी इस बचन पर यों बोली तत्काल।
मुनिराज मेरी उमर है अब बारह साल॥
है पति के मेरे सात साल और सास को चौथा साल लगा।
पर नहीं ऋषि जी इस जगमें अभी श्वसुर का मेरे जन्म हुआ॥
यह सुनते ही नारी के वचन चलदिये ब्रह्मचारी फौरन।
वह देवी भी फिर उसी तरह भोजन के कार्य में हुई मगन॥
श्रोतागण अब कीजिये श्रवण आद का हाल।
सेठ भी घर पर आगये गले दुशाला डाल॥
द्वार के बाहर रोककर अपनी नित की चाल।
उन्हों ने कानों से सुना अपने वह अहवाल॥
इन बातों के सुनते सुनते सीने में क्रोध उभर आया।
दोनों आंखों में लाला सी फौरन ही खून उतर आया॥

विकराल हुई सूरत उनकी और लाल लाल दोनों आंख ।
जैसे शिकार पर होती है नर हर की अति कराल आंखें ॥
पुत्रबधु से सेठ जी यों बोल तत्काल ।
तेरी बातों से हुआ मुझ को बहुत मलाल ॥
ऐदुष्टां ऐ कुटिला नारी क्यों झूठ वृथा तूने बोला ।
कब बासी भोजन किया बता अमृत में विष कैसे घोला !
जो मेरा जन्म ही नहीं हुआ तब तू यहां तक कैसे आई !
और चार साल की सास तेरी अहो यह तेरी कुटलाई ॥
तू पुत्र से मेरे बड़ी हुई यह झूठ कहा किसलिये बता ।
यह बज्र समान तेरी बातें सुन कर मेरा फट गया हिया ॥
मैं सत्तर वर्ष का बैठा हूं जो तूने कहा पैदा न हुआ ।
पचास साल की सास तेरी तू कहे चौथा साल लगा॥
तू पति से अपने बड़ी हुई जो सात वर्ष का बतलाया ।
और अपनी आयु बारह साल क्या नशा कोई तूने खाया॥
पुत्र बधु निज श्वसुर से यों बोली कर जोर ।
पिता शान्त कर चित्त को देखो मेरी ओर ॥
हे पिता जी मेरी बातों में गर झूठ का लेशमात्र भी हो ।
तो खड्ग से मेरी जिह्वा को बल्के गर्दन की उड़वादो ॥
स्थान तलक उस साधु के हे पिता आप कृपा कीजे ।
साधु से अर्थ इन बातों का सुन कर सन्देह मिटा लीजे ॥
पुत्रबधु को सेठ जी लेकर अपने साथ ।
योगीराज के सामने आय नवाया माथ ॥
साधु भी अन्तरयामी थे सब समझ गये शंका मनकी ।
ऐसे ही सच्चे यति सती शंका हरते हैं दुर्जन की ।
जो नाहर को भी युक्ति से सीधे रस्ते पर ले आवें ॥
जो दुर्जन को भी प्रीति से अपने सतमार्ग पर ले आवें ॥

ऐसे महात्मा अगर मिलें तो भाग्य उदय हो जाता है।
इस पारस पथरी से मिल कर लोहा कञ्चन बन जाता है॥
वही ऋषि वोही मुनी वही हैं सच्चे साध (साधु)।
जो क्षण भर में भक्त के हरें कोटि अपराध॥

सेठ न करने पाये थे अपना सवाल।
ऋषिराज देने लगे यों उतर तत्काल॥

सुनो सेठ जी चित्त को करके अपने शान्त।
मेरी और इस युवती की बातों का वृत्तान्त॥
इसने हम से यों पूछा था तुम इतनी जल्दी क्यों आये?
था तात्पर्य इस बात का यह क्यों जल्दी कपड़े रंगवाये!
यह सवाल इसने हम से किया है अभी तुम्हारा बालकपन।
फिर ऐसी बाल अवस्था में साधु बनने का क्या कारण!
तब इसको उत्तर हमने दिया है काल की अद्भुत गति माता।
जो समय हाथ से निकल गया वह नहीं किसी सूरत आता॥
इस लिये जगत में हे माता जो करना हो सो आज ही कर।
क्या बाल अवस्था युवा जरा इन बातों पर कुछ ध्यान धर॥
और इसने कहा इस घर में तो सब बासी टुकड़े खाते हैं।
मतलब यह था सब पिछले शुभ कर्मों के फल पाते हैं॥
सब पूर्व जन्म का दिया लिया इस जन्म में प्राणी पाता है।
जो आगे को नहीं करता है वह फिर पीछे पछताता है॥
और इसने उमर बतलाई वह भी हम तुम्हें सुनाते हैं।
जिसमें तुम को शङ्का आयी वह सब सन्देह मिटाते हैं॥
यह बारह वर्ष से लगी हुई है नियम धर्म अरु आतम में!
और चार साल से सास का मन है लगा हुआ परमातम में॥
और सात वर्ष से ही इसके स्वामी को आत्म ज्ञान हुआ।

पर एक तूही सारे घर में ऐ मूरख शिलासमान हुआ ॥
तेरा है ज्ञान से शून्य हृदय इस लिये नहीं जन्मा है तू ।
जिस समय से जिसको ज्ञान हुआ उतनी ही है उसकी आयु ॥

सुन कर साधु के वचन हुआ सेठ को ज्ञान ।
उत्तर में कहने लगे सुनिये कृपा निधान ॥

हे नाथ जिस तरह रोगी का सब रोग दवा से जाता है ।
जिस तरह सूरज की किरणों से सब अन्धकार मिट जाता है ॥
जिस तरह से दीपक का प्रकाश घर को रोशन कर देता है ।
जिस तरह भाग्य वाला कोई धन से घर को भर देता है ॥
इस तरह आपके वचनों से भगवन् मेरा कल्याण हुआ ।
सब काम क्रोध मद लोभ छुटे और मुझको आतमज्ञान हुआ ॥
अब मैं इन सब विभुतियों का सच्चे मन से धिक्कारता हूं ।
अब उदय अस्त के राज को भी घृणा से ठोकर मारता हूं ॥
अब मेरा बेड़ा पार हुआ भगवन् ! इन चरणों को छुकर ।
क्या खबर थी कैसी गति होती मैं बनता शुकर वा कूकर ॥
काषाय वस्त्र अब स्वामी जी मुझ को भी शीघ्र पहिना दीजे ।
जो रंग है तुम पर चढ़ा हुआ मुझ पर भी वही चढ़ा दीजे ॥

योगीराज महाराज ने दिये वस्त्र काषाय ।
रहे सेठ मुनिराज संग बन में अति हर्षाय ॥

शब्द १३६

दोहा-माया तेरा ठगनी भई, ठग लीना सब देश ।
जिस ठग ने माया ठगी, उस ठग को आदेश ।।

माया महा ठगनी हम जानी ।।टेक।।

त्रिगुण फांस लिये कर डोले, बोले मधुरी बानी ।
केशव के कमला होय बैठी, ब्रह्मा के ब्रह्मानी ।
पण्डा के मूरत होय बैठी, तीरथ हूं में पानी ।। १ ।।
जोगी के जोगन होय बैठी, राजा के घर रानी ।
काहू के हीरा होय बैठी, काहू के कौड़ी कानी ।।२।।
भक्त के भक्तन होय बैठी, शिव के भवन भवानी ।
कहत कबीर सुनो भई साधो यह, सब अकथ कहानी

शब्द १३७

मना तैंने राम न जाना रे ।
जैसे मोति ओस का रे तैसे यह संसार ।
देखत ही का झिल मिलारे जात न लागे बार ॥१॥
सोने का गढ़ लंक बानाया सोने का दरबार ।
रत्ति सोना ना मिलारे रावण मरती बार ॥२॥
दिन गंवाया खेल में रे रैन गंवाई सोय ।
सूरदास भजो भगवन्ता होनी होय सो होय ॥३॥

शब्द १३८

नहीं छोड़ूं रे बाबा रामनाम, मेरी और पढनसों नहीं काम
प्रहलाद पठाये पढन शाल, संगसखा बहु लिये ग्वाल बाल
मोको कहा पढावत आल जाल, मेरी पटिया पै लिखदेऊ
श्रीगोपाल ॥ १ ॥

यह षंढामर्क कह्यो जोय, प्रहलाद बुलायो बेगधाय ।
तू राम कहन को छोड़बान तुझे तुरत छुड़ाऊं कह्यो
मान ॥२॥

मोको कहा सतावो बार बार प्रभु जलथल नभ कीन्हे
पहार । एक राम न छोड़ूं गूरुहि गार मोहे घालजार
चाहे मार डार ।३।

काढ खड़ग कोप्यो रिसाय तुझे राखन हारो मोहि
बताय । प्रभु खम्ब से निकसो हो विस्तार हिरणाकुश
छेद्यो नख विदार ॥४॥

श्री परम पुरुष देवादि देव भक्त हेत नरसिंह भेव ।
कहे कबीर कोउ लखे न पार प्रहलाद उबारे अंक
बार । ५॥

शब्द १३९

दर्शन देना प्राण पियारे नन्दलाल मेरे नैनों के तारे-
॥टेक ।

दीनानाथ दयाल सकल गुण नवल कीशोरी सुन्दर मुख वारे।।१।। मन मोहन मन रुकत न रोवयो दर्शन की चित चाह हमारे ।२। रसिक खुशाल मिलन की आशा निशि दिन सुमरन ध्यान लगा रे ।३।

शब्द १४०

संकट काट मुरारी हमरे संकट काट मुरारी।
संकट में इक संकट उपजो अरज करै मृगनारी।।टेक।।
इक ढिग बावर जाय गडरिया इक ढिग श्वान विहारी।
इक ढिगजाय अंग साढी, इक ढिग जा बैठ्यो फन्दकारी
उलट पवन बागर को लागी, श्वान भयो संसकारी।
बांबी से भुजंग को निकस्यो, ताहि डस्यो फंदकारी।२
नाचत कूदत हिरनो निकसो, भलो कियो गिरधारी।
सूरदास प्रभु तुमरे दर्श को, चरण कमल बलिहारी।।३

शब्द १४१

रे भूले मन वृक्षों का मत लेरे॥ टेक॥
काटनिये से बैर नहीं है, सींचनिये से नहीं सनेह रे॥
को काई वाको पत्थर मारे वाहू को फल दे रे॥ २॥
शीत घाम सब आपही ओटे औरों का सुख दे रे॥३॥
कहे कबीर शरण ले गुरकी, भवसागर तीरण होरे॥

शब्द १४२

भज मन राम चरण दीन राती ॥ टेक ॥

रसना कसना भ ो तुम हरी पद, सुमरत क्यों अलसाती
तुलस द स एक विनय लिखत है प्रथम अमरकी पाती
जाके कहत द ्त दुःख दारुण सुनि अ र ताप बुझती ॥
सुनते श्रवण सुजस रघुवरक सुन जुड़ात हिय छाती
श्रोता सुमति सो, हरि जन देते स नाह सुहाती ॥४॥
रामचन्द्र को नाम अमीरस सो रस काहे न खाती ॥ ५ ॥
संवत सोलह सा इकतीसा ज्येठ सुदी छट स्वाती ॥

शब्द १४३

भज मन राम चरण सुख द ई ॥टेक॥

जेहीं चरणन से निकसी सुर सती, शंकर जटा समाई ।
जटा शंकरी नाम प ो है त्रिभुवन तारन आई ॥१॥
जेहि चरणन की चरण पादुका भरत रह्या लव लाई ।
सोई चरण केवट धो लीने तब हरि नाव चलाई ॥२॥
सोई चरण सन्त जन सेवत सदा रहत सुखदाई ।
सोई चरण गौतम ऋषि नारि परस परम पद पाई ।३
दण्डक वन प्रभु पावन कीन्हों ऋषियन त्र स मिटाई ।
सोई प्रभु त्रिलोक के स्वामी कनक मृगा संग धाई ।३॥

ऋषि मगोत्र बन्ध भय व्याकुल तिन जय छत्र धराई।
रिपु को अनुज विभीषण निशिचर पर सत लंका पाई
शिव सनकादिक अरु ब्रह्मादिक शेष सहस्रमुख गाई
तुलसीदास मरुत सुत को प्रभु निज सुख करत बड़ाई॥

शब्द १४४

आये आये विदुर घर पावना जी॥ टेक॥

विदुर नहीं थी घर विदुरानी आवत देखे सारंगपानी।
फूला आंगन आवे बिछता, भोजन कहा जिमावना जी
केला एक प्रेम से लाई, गिरी गरी सब देत गिराई।
छिलका देत श्याम मुख मांही लागे परम सुहावनाजी॥
इतने मांही विदुर जी आये, खोटे खारे वचन सुनाये
छिलका देत श्याम मुख मांहीं कहां गमाई भावना जी
केला विदुर लिये हाथों मांही गिरी देत गिरधर मुख
माहीं।
कहैं कृष्ण सुनो विदुर जी सो सवाद नहीं भावनाजी।
बासी कूते रूखे सूखे हम हैं विदुर जी प्रेम के भूखे।
धन्यर गोप व्रज नारी कृष्ण विदुर घर पावना जी॥

शब्द १४५

।टेक। जिधर देख ताहूं उधर तू ही तू है,

कि हर शै में जलवा तेरा हू बहू है।
चमन में सह पर यह कहती है कुमरी
तुही तू तुही तू तुही तू तुही है ॥१॥
गुलिस्तां में गुल पर यही कहती है बुलबुल,
तुही तू तुही तू तुही एक तू है ॥२॥
मैं सुनता हूं हर वक्त तेरी कहानी,
कि तेरा ज़िकर हो रहा है कू बकू है ॥३॥
बिना जिसके माबूद औरों को बोलो
ज़ुबां का संभालो यह क्या गुफ्तगू है ॥ ॥

शब्द १४६

दाता एक राम भिखारी सारी दुनियां ॥ टेक ॥
राजा चढे रण घन दुर्जन दुनियां।
समर समूह पै द ऊ और सुर मुनियां ॥ १ ॥
चोर चले चोरी करण ठग ठान ठनियां।
साहूकार रोकड़ बांधे लाद चले बनियां ॥ २ ॥
जोगी जती जाग साधैं जपैं माला मनियां।
अंजली पसार मांगे बड़े ज्ञानीगुनियां ॥ ३ ॥
कोई नाचे गावे कोई तोड़े तान तनियां।
भजन भरोसे भीषण दास जन मुनियां ॥ ४ ॥

प्रार्थना

दीनबन्धो हम सबों को ज्ञान भिक्षा दीजिये।

आप के हम पुत्र हैं सब भान्ति रक्षा कीजिये ॥
दो हमें वर भक्ति अपनी और सुन्दर धीरता ।
शक्ति विद्या मान धन यश आदि सच्ची वीरता ॥
देशसेवी हम सभी हों सत्य ही भाषण करें ।
झूठ छल चोरी जुवा से नित्य हे ईश्वर डरें ॥
अन्त को सब शिशु गणों की आप से विनती यही ।
हों सभी इस योग्य जो शोभित करें भारत मही ॥
हे प्रभो आनन्ददाता ज्ञान हम को दीजिये ।
शीघ्र सारे दुर्गुणों को दूर हम से कीजिये ॥
लीजिये हमको शरण में हम सदाचारी बनें ।
ब्रह्मचारी धर्म रक्षक वीर व्रतधारी बनें ॥
सृष्टिपालक दुष्टघातक भक्त सुखदायक तुम्हीं ।
दीनबन्धु करुणासागर और सब लायक तुम्हीं ॥
प्रह्लाद ध्रुव के सम हमें प्रभु अपनी भक्ती दीजिये ।
देश हित तनधन बली करने को तत्पर कीजिये ॥

प्रार्थना

ईश्वर तू है सबका स्वामी, क्षमा सिन्धु दर अन्तर्यामी।
महिमा तेरी अपरम्पार, तुझ से गये वेद भी हार ॥
तूने सारा जगत बनाया अनुपम दृश्य हमें दिखलाया।
सूरज तारे चांद बनाये जलथल अनल पवनप्रगटाये ॥

व्यापी सत्य सिन्धु सुख खान करुणानिधि तू है वन्दन,
दानी ज्ञानी घट २ वासी तू है निर्विकार अविनाशी ॥
जीना मरना तेरे हाथ अधः पतन उन्नति तव साथ।
यश अपयश का तू ही दाता, कुछ न तेरा जाना जाता॥
चींटी से हाथी तक सारे जितने जीव जन्तु बेचारे।
देकर सबको दाना पानी रखता तू उनपर निगरानी ॥
राई को पर्वत कर देता पर्वत राई करधर देता।
नगरों का तू निर्जन करता वन में नगरी सिरजन करता ॥
ब्रह्मादिक तव ध्यान लगाते, नारदि मुनिवर गुणगाते
गाते गाते वे थक जाते तो भी पार न तेरा पाते ॥
हे ईश्वर हे जगदाधार महिमा तेरी अपरम्पार।
हमारी रख लीजे प्रभु लाज, विनय यही हैं करते आज॥
हे प्रभु रक्षा करो हमारी हम आये हैं शरण तुम्हारी।
दिन भर के अपराध हमारे क्षमा करो करुणा निधि सारे

प्रार्थना

हे नाथ हे प्रभु महा महिमा तुम्हारी,
बाणी नहीं कह सुना सकती हमारी।
सौ वर्ष भी यदि सदा तव कीर्ति गावें,
तो भी कभी न उस के वह पार जावें ॥ १
पृथिवी पहाड़ नद पेड़ समुद्र सारे,

हैं यह समस्त जगदीश दिये तुम्हारे ।

हे ईश आप यदि सूर्य हमें न देते,

तो जीव जन्तु जग में न कदापि जीते ॥ २

यह जो अनेक फल हैं जग में दिखाते,

खाते नहीं हम कभी जिन को अघाते ।

यह पुष्प वृन्द सुखदायक जो खिले हैं,

सो भी सभी तव कृपा कण से मिले हैं ॥३

देते न जो तुम हमें जगदीश आंखें,

पाते इन्हें न करते यदि यत्न लाखें,

हे सर्व लोक सुख दायक सौख्य धाम,

हे विश्व नाथ विश्वेश तुम्हें प्रणाम ॥४

जो जो छिपाय हम काम बुरे करैं हैं,

जाने न और इस से मन में डरैं हैं ।

सो सो सदा तुम उसी क्षण जान लेते,

तत्काल नाथ हमको तुम दण्ड देते ॥ ५

हे हे दयामय प्रभो कर जोड़ते हैं,

सारी कुचाल अब से हम छोड़ते हैं,

जो भूल चूक परमेश्वर हो हमारी,

कीजे क्षमा शरण में हम हैं तुम्हारी ॥६॥

प्रार्थना

इस देश को हे दीनबन्धो आप फिर अपनाइये।
भगवान भारत वर्ष को फिर पुण्य भूमि बनाइए ॥
जड़ तुल्य जीवन आज इसका विघ्न बाधा पूर्ण है।
हे रम्ब अब अवलम्ब देकर विघ्न हर कहलाइए।
हम मूक किंवा मूढ हों रहते हुये तुझ शक्ति के।
भां ब्रह्मी कहदे ब्रह्म से सुख शान्ति फिर सरसाइये
सर्वत्र बाहर और भीतर रिक्त भारत हो चुका।
फिर भाग्य इसका हे विधाता पूर्व सा पलटाइये ॥
तू अन्न पूर्णा मां रमा है और हम भूखों मरें।
कहदे जनार्दन से जगाकर दैन्य दुःख मिटाइये ॥
यह सृष्टि गौरव गज ग्रसित है ग्रह दश के ग्राह से।
हे भक्तवत्सल शुभ सुदर्शन चक्र आप चलाइये ॥
मां शंकरी सन्तान तेरी हाय यों निरुपाय हो।
श्री कंठ से कहदे कि हे हर अब न और सताइये ॥
शून्य श्मशान समान भारत हाय कबसे हो चुका।
आकर कराल विपत्ति विष से व्योम केश बचाइये ॥
सम्पूर्ण गुण गौरव रहित हम पतित अवनत हो चुके
अब छोड़ निर्गुणता विभो सत्वर सगुन बन जाइये ॥
सीतापते सीतापते यह पाप भार निहारिये।

अवतीर्ण होकर धर्म का नित्र राज्य फिर फैलाइये ॥
गोपाल अब वह चैन की बंशी बजेगी कब यहां ।
आलस्य से अविभूत हमको कर्म योग सिखाइये ॥
जिस वसुमति पर आपने बहु ललित लीलायें रचीं ।
करुणा निधे इस काल इसको आप यों न भुलाइये ॥
पशु तुल्य परवशता मिटे प्रकटे यथार्थ मनुष्यता ।
इस क्रूर मण्डूकत्व से परमेश विरुद छुटाइये ॥
जीवन गहन वन सा हुआ है भटकते हैं हम जहां ।
प्रभु वर सदय होकर हमें सन्मार्ग पर पहुंचाइये ॥
वह पूर्व की सम्पन्नता यह वर्त्तमान विपन्नता ।
अबतो प्रसन्न भविष्य की आशा यहां उपजाइये ॥
वरमन्त्र जिसका मुक्ति था परतन्त्र पीड़ित है वही ॥
फिर वह परम पुरुषार्थ इसमें शीघ्र ही प्रकटाइये ॥
यह पाप पूर्ण परावलम्बन चूर्ण होकर दूर हो ।
फिर स्वावलम्बन का हमें प्रिय पुण्य पाठ पढ़ाइये ॥
व्याकुल न हो कुछ भय नहीं तुम सब अमृत सन्तान हो
यह वेद की वाणी हमें फिर एक बार सुनाइये ॥
यह आर्य भूमि सचेत हो फिर कार्य भूमि बने अहा ।
यह प्रीति नीति बढ़े परस्पर भीति भाव भगाइये ॥
किसके शरण होकर रहें अब तुम बिना गति कौन है ।
हे देव वह अपनी दया फिर एक बार दिखाइये ॥

प्रार्थना

भक्ति अपने पद कमल की दीजिये प्रभु दीजिये
चरण सेवक आप आपने कीजिये प्रभु कीजिये ॥
अनगणित यह वस्तुएँ प्रभु आपने की हैं प्रदान।
ज्ञान की शक्ति हमें प्रभु दीजिये हरि दीजिये ॥
अनहित न होवे जन्म भर हमसे किसी का हे प्रभो।
बुद्धि ऐसी हमको हे प्रभु दीजीये हरिदीजीये ॥
हे स्वामी चरणों में तुम्हारे कोटि बार प्रणाम है।
दास हमको आप अपना कीजिये हरि कीजिये ॥१॥

प्रार्थना

पितु मात सहायक स्वामि सखा, तुमही एक नाथ हमारे हो
जिनके कछु और आधार नहीं तिनके तुमही रखवारे हो
प्रतिपाल करो सगरे जग के अतिशय करुणा उर धारे हो
भूलि हैं हम ही तुमको तुमतो हमरी सुधि नांहि बिसारे हो
उपकारन को कछु अन्त नहीं छिन ही छिन जो विस्तारे हो
महाराज महा महिमा तुमरी समझे बिरले बुधवारे हो
शुभ शान्ति निकेतन प्रेम निधे मन मन्दिर के उजयारे हो
यह जीवन के तुम जीवन हो इन प्राणन के तुम प्यारे हो

शब्द १४७

सांवरे संग खेलो ना होरी, पुरुषोत्तम संग खेलो ना०
सास ननद दौरनियां जठनियां केते ही नाम धरो री।
समझाई वरजी नहीं मानूं होनी होय सो होय री।
मेरो मन हरि से लगो री ॥१॥
सुनियो री मेरी अगड़ पड़ौसन कहो अब कैसे करो री
बिन हरी फाग आग सी लागत तन मन जात जरो री
प्राण नहीं मानत मोरी ॥२॥
चलो सब हिल मिल कर बिनती करैं सीस नाय कर जोरी
माने तो माने नहीं करैं बारा जोरी पकड़ैंगी नन्द किशोरी
ऐसो कहा सब से बहोरी ॥३॥
भक्ति की मांग प्रेम का सिन्दूरा सत की मेंहदी रचो री
मन मन के कर माला करलो ज्ञान की गाति कसा री
ध्यान की ओट मिलोरी ॥४॥
नक वसर चून्दर पहनाओ केसर रंग भर डोरी
मल कर गुलाल श्याम के मुख मूं निर्भय कहो होरी॥
तभी जीवन अतो री ॥५॥

शब्द १४८

धर्म मत हारो रे जग में जिन्दगी दिन चार ॥ टेक ॥
अगम लोक से चल कर आया, पल्ले खर्ची वहु नहीं लाया

यहां आकर गढ़ कोट चिनाया यों ही जातो संसार ॥२

धर्मराज के जाना होगा, सारा हाल सुनाना होगा।
फिर पाछे पछताना होगा, कर लो मन सोच विचार ॥
अब तो चेत करो मेरे भाई, तैंने वृथा उमर गवांई।
तैं धोके काया लुटवाई, भज राम नाम है सार ॥३॥
बार बार सतगुरु समझावे, मिनखा जन्म बहुर नहीं पावे
गया वक्त फिर हाथ न आवे, श्री स्वामी जी कहैं हर बार

शब्द १४९

कांटे से भी खराब है जिस गुल में बू न हो।
वीराने की मिसाल है जिस दिल में तू न हो॥
गूंगी ज़बां हो जिसमें पै तेरी गुफ्तगू न हो।
जल जाय दिल वह जिस में तेरी जुस्तजू न हो।
हो स्याह दिल सताये किसी बे जबां को ॥
मालिक के रूबरू वह कभी सुरखरू न हो ॥
दुनियां से हाथ धोके करले बे ज़बां पे प्यार।
हर हाल में हैं पाक उसे हाजत वजू न हो ॥
इन्सां है वह जो आप सा जाने जिहां को।
तफरीक जिसके दिल में कभी मैं व तू न हो॥
खोलें हुये हूं हाथ जहां से हमारा कूच।
जिसकी हवे हवस में कोई आरज़ू न हो ॥

मरूमूर है शराब सुलह कुल का जाम पी ।
इस राम के हबीब का खाली सुलू न हो ॥

शब्द १५०

म्हाने पार उतारो जी थाने थारे निज भक्तांरी आन ॥
हमारो अवगुण नेक न चितवो, अपनो ही कर जान ।१॥
काम क्रोध मद लोभ मोह वश, भूलो पद निर्वान ।
अबतो शरण गही चरणन की, मत दीजो मोहि जान ॥२॥
लख चौरासी भटकनर, मेरो पड़ो दिवाम ।
भवसागर में बह्यो जात हूं, रखिये श्याम सुजान ॥३॥
हूं तो कुटिल अधम अपराधी, ना सुमरो तेरो नाम ।
नारो के प्रभु अधम उधारन, गावत वेद पुरान ॥४॥

शब्द १५१

नारायण जिनके परिपालक तिनको कौन डुबाय सके रे
प्रह्लाद भक्त को डारा अग्नि में रोम न एक जलाय स
के रे ॥१॥गज का पकड़ ग्राह ने खींचा, नहीं जल
बीच डुबाय सके रे ॥२॥द्रुपद सुता की बीच सभा
में स्वयं न लाज उठाय सके रे ॥३॥ब्रह्मानन्द जो
हरि गुण गावे सो निर्भय पद पाय सके रे ॥४॥

शब्द १५२

मनवा नहिं विचारी रे तेरी मेरी कहतां उमर खोदई सारी रे। टेक। गर्भवास में रक्षा कीनि सदा बिहारी रे। बाहर काढ़ो नाथ भक्ति करस्यूं थारी रे ॥१॥
बालक पन में लाड लडायो माता थारी रे।
पीछे तू माया संग लिपट्यो जोड़ी यारी रे ॥२॥
सतगुरु अंत ज्ञान की कीनी लागी खारी रे।
जो कोई कहता भजन करो, जद दीनी गारो रे ॥३
पीछे तौं मन सोच करयो, कुछ बनी न म्हारी रे।
पार लगाओ नाथ धानो, शरण तिहारी रे ॥४

शब्द १५३

धोलैं छै वाकी खबर नहीं कांई आवै कांई जाय ॥टेक॥
पानी को नर बन्यौ बुलबुलो, धरो आदमी नाम।
कौल किया था भजन करण का, आयकसायो तैं तो गाम
हाथी छूटर थान से रे, लश्कर पड़ी पुकार।
दश दरवाजा बन्ध करा रे, निकल गया असवार ॥२॥
जैसे पाणी ओस का रे, तैसो यो संसार।
झिलमिल झिलमिल हो रही रे, जात न लावै बार ॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो झूठा जगत व्यवहार।
राम नाम की नाव बनाले उतर जायगा पार ॥४॥

शब्द १५४

प्रभू कुदरत खेल रचाया ॥टेक॥

तू निराकार, तू निर्विकार, तू एकसार, यह सब असार,
कर नमस्कार सौ बारा। बाजत हैं बाजा सितार,
गुण गावें तेरा तार तार, हैं ध्यावें तुझको बार बार,
सब प्रेमी तुझको गाया ॥१॥
कड़कडात जो गरमी पड़त है, बादल कहीं न नजर पड़त हैं
आबा दाना पानी खाना, मिलता नहीं है शाम सुबह
आई घटा घन घोर ओर से, बादल बरसै ठौर ठौर से
इक पल में समय बदलाया ॥२॥
चिड़िया चिड़ चिड़, कोयल कू कू, पीपी पपीहा फाख-
ता हू हू करते हैं हरसू। हरयावल का फरश बिछा
है बीरबहूटी के मोती से जड़ा है, कंवल फूलों से लदा
है, और फलों से लदाया ॥३॥

शब्द १५५

गुरां संग मेला है सुनियो सन्त सुजान ॥टेक॥
प्रेम नगर की औघट घाटी, निर्भय पन्थ दुहेला है ॥१॥
लोक लाज कुल की मर्यादा, सीश दिया सो चेला है ॥२॥
उलटी पवन शिखर धुन लागी, धर रहा ध्यान अकेला है॥
पाप पुण्य से न्यारा रहता, सत्गुरु आप नहेला है ॥४॥

बीसा सन्त कहै सुनो साधो, बाहर भीतर खेला है ॥५॥

शब्द १५६

सजन घर चलो सुहाग भरी ॥टेक॥
शब्द की दुलिया पांच कहार, चरण धरो हे विचार विचार।
पांच मवासी घोड़े असवार, ज्ञान खड़ग ले होले हुश्यार ॥
इस मक्के की छोड़ दे रीत, पार ब्रह्म से जोड़ो प्रीत ॥
कहै कबीर जागैं उनके भाग, मिला सत्गुरुदिया है सुहाग॥

शब्द १५७

मेरो हरि बिन कौन सहाई ॥टेक॥
काकी मात पिता सुत बनिता, को काहू को भाई ॥१॥
धन धरनी अरु सम्पत्ति सगरी, जो मानिऊ अपनाई॥२॥
तन छूटे कछु संग न चाले, कहा ताहे लिपटाई ॥३॥
दीन दयाल सदा दुख भञ्जन, तासिऊ रुचि न बढ़ाई ॥४॥
नानक कहत जगत सब मिथ्या, ज्यों सुपनां रह नाहीं ॥५

होरी

चलो नन्दलाल के संग में सकल होरी मचावेंगी।
किसी विधि साथ छल बल कर पकड़ उसको बुलावेंगी ॥टे०
चलो सब साज आभूषण, कनक पिचकारी लले कर।
चपल घनश्याम के ऊपर, सकल जल्दी से धावेंगी ॥१॥
छबीले लाल को आली, पकड़ जिस वक्त पावेंगी।

उठाकर केशरी सारी, नई नारी बनावेंगी ॥२॥
हमें जैसा नचाया है, उन्हें भी हम नचावेंगी।
पकड़ उस वक्त छोड़ेंगी, कि जब हा हा करावेंगी ॥३॥
फुवार रंग केसर की सकल हिल मिल उठावेंगी।
उन्हें हम बोर कर रंग में, यशोदा ढिंग ले जावेंगी ॥४॥
यशोदा देख छवि बांकी, बड़ा आनन्द मनेंगी।
बहुत सत्कार से हम को, हंस हंस के बुलावेंगी ॥५॥
उठी कह कर सकल गोपी, यह अवसर फिर न पावेंगी॥
शमी रस भरी होरी निश दिन खूब पावेंगी ॥६॥

शब्द १५८

मन लागा राम फकीरी में ॥टेक॥
जो सुख देखा राम भजन में, सो सुख नहीं अमीरी में ॥१॥
भला बुरा सब का सुन लीजे, कर गुजरान ग़रीबी में॥२॥
हाथ में कुण्डी बगल में सोटा, चारों कूंट जगीरी में ॥३॥
आखिर यह तन खाक मिलेगा, कहां फिरत मगरूरी में ॥४॥
कहैं कबीर सुनो भाई साधो, साहिब मिले सबूरी में ॥५॥

शब्द १५९

रघुवर कौशल्या के लाल मुनि की यज्ञ रचाने चले॥टे०॥
पहुंचे जनकपुरी दरम्यान, तोड़ा सब राजन का मान।
उन्होंने नहीं किया अभिमान, शिव के धनुष तोड़ने वाले॥

सीता ब्याही आई रणवास, मात कैकई भई उदास।
दिया बारह बरस बनवास, अहल्या नार उधारन वाले ॥
जा बान्धा सिन्धु का सेत सुवरन लंका करदी खेत।
लंका भगत विभीषण हेत, जल पर शिला तिराने वाले ॥
बेड़ा आन पड़ा मझधार, तुम बिन कौन लगावे पार।
तुम तो हो गये खेवन हार, मेरी धीर धराने वाले ॥

शब्द १६०

धीरे चलो तुम गोप छलीरी ॥टेक॥
नूपुर धुनी जो सुन पावेगा, गेरेगा फिर आय गलीरी ॥१॥
उरझो भाड़ कठिन सों सुरझत, हम अबला हवपुरुष बलीरी
नारायण नित दाँव शब्दमें, लगो रहत वह छैल छलीरी ।३

शब्द क

श्याम की ऊधो जुदाई अब सही जाती नहीं।
न दिन को चैन रात को आखों में नींद आती नहीं ॥१॥
बेवफा हम से खफा हो, जा दिया सौतन को दिल।
क्या खता मेरी खबर, भेजी कोई पाती नहीं ॥२॥
दिल दिया ग़ैरों को हर दम, ग़म दिया हम को सनम।
अब तो कोई मिलने की सूरत, हम को दिखलाती नहीं ॥३॥
माखन व मिसरी छोड़कर वह गये पीने को छाछ।
ताब जुगनू कभी महताब को, पाती नहीं ॥४॥
उनकी उलफत में हमेशा, गोपियां गाती थीं राग।

वह गये हैं जब से कहीं, गाती हैं पर भाती नहीं ॥५॥
कान में कुण्डल गले सेली, मलैं तन पै भभूत।
होंव हम जोगनियां उन्हें, कहते शरम आती नहीं ॥६॥
मार कर आसन ले माला, करैं कुंजन में भजन।
यह सुख लिखते ज़रा, तबीयत तरस खती नहीं ॥७॥

शब्द १६१

नारायण मैं शरण तिहारी दया करौ महाराज ॥टेक॥
मात तात सुत दार सहोदर, कोई न आवत काज ॥१॥
भवसागर जल दुस्तर भारी, तुमरे चरण जिहाज़ ॥२॥
पाप अनेक कये जग मांही, तुमको है अब लाज ॥३॥
ब्रह्मानन्द दया तुमरी से, सब दुःख जावत भाज ॥४॥

शब्द १६२

आधीन होकर बुरा है जीना,
है मरना अच्छा स्वतन्त्र होकर।
सरलको तजकर गरल से प्याला,
है मरना अच्छ स्वतन्त्रहोकर ॥१॥
पड़ी हो हाथों में हथकड़ी यदि,
तो स्वर्ग के सुख से लाभ क्या है।
नरक के दुःख में निवास निशिदिन,

है करना अच्छा स्वतन्त्र होकर ॥२॥
जो दास हो कर मिलें भवन में,
सुस्वादु भोजन तो तुच्छ हैं वह।
सदैव उपवास करके बन वन,
विचरना अच्छा है स्वतन्त्र होकर ॥३॥
मिले उपाधी या मान पदवी,
जो सेवा करके व्यर्थ हैं सब।
घृणा के गड्ढे में होके व्याकुल,
डूबना अच्छा स्वतन्त्र हो कर ॥४॥

शब्द १६३

सोच्या क्यों करना भाई जो करसी करतार ॥टेक॥
सोच्यां सोच न हो वही जो सोचे लख बार ॥
चुप्या चुप्य न हो वही जो लायें रह्यां लव तार ॥
भुख्यां भुक्ख न ऊतरी जो बन्ने परियां पार ॥
कित सुचियारा हो वही क्यों पूड़े तुट्टे पाव ॥
हुकम रज़ाई चल्लना गुरु नानक लिखियां नाल ॥

शब्द १६४

सुत्तां ऐत्ते जाग बंदिया तेरा नाम जपन दा बेला ॥टेक॥
उचियां पार वे अन्त स्वामी कौन जाने गुण तेरे।
गावत उदरे सुनते भी उदरे बिनसे पाप घनेरे ॥

पशु परै तुम मुग्ध को तारैं पापैं न पार उतारैं।
नानक दास तेरी शरणाई सदा सदा बलिहारी ॥

शब्द १६५

सच्चा सतगुरु मिलै तो चेला पलट कै कीड़े सेभृंग कोकर।
समाया अपने में आप फिर में,
मिसाले जल की तरंग होकर ॥१॥
इड़ा पिंगला सुषम्ना,
तीनों नाड़ी के सङ्ग हो कर।
हमेशा बहती है यह त्रिवेणी,
हमारी भृकुटी में गंग हो कर ॥२॥
यह दिल को धोया मैं खूब मलमल,
मिसाले दर्पण के रंग हो कर ॥२॥
दुई दूर करै हुवा मैं इकता,
दुरङ्ग से फिर इकरङ्ग होकर ॥३॥
रूप सच्चिदानन्द है मेरा,
कहा जबां से सोऽहं होकर।
समाया अपने में आप फिर में,
मिसाले जल की तरङ्गाहोरु कर ॥४॥
दिल कायर के कतर लिये पर,
हुवा वह बे पर अपंग होकर।

क्या मजाल है उड़ान भरले,
हमारा दिल यह मतंग होकर ॥५॥
ज्ञान का अंकुश लगाया हमने,
हमेशा सन्तों के संग होकर।
बिन सत्संगति कोई न सुधरे,
कुसङ्ग छोड़ा सुसङ्ग होकर ॥६॥
नाभी कमल से गया मैं सीधा,
बङ्कु नाल की सुरंग होकर।
शून्य शिखर में सोया मैं सुख से,
जन्म मरण से निसङ्ग होकर ॥७॥
क्या मजाल है वहां काल की,
जो देखे मुझे बदरंग होकर।
योगी जुगत जो जीवं हमेशा,
युगानयुग उस प्रसंग होकर ॥८॥
सूरज गिरी कहैं सन्यासी से,
अड़ै कोई कुफ़रा मलंग होकर।
तो खूब ठहरे बराबरी की,
सभा में शब्दों से जंग होकर ॥९॥
संसारी नहीं अड़ै सन्त से,
अड़ै कोई नंगा निहंग होकर ॥
आखिर को फिर जले ज्ञान बिन,

मिसाले दीपक को पतंग होकर ॥१०॥
कविता गिरि कहैं कविताई को,
ढंग से मत कर कुढंग होकर ॥

शब्द १६६

सिया राम कहने का मजा जिस की जबां पर आगया।
जीवन वह मुक्ति हो गया चारों पदार्थ पागया ॥
लूटे मज़े ध्रुव भक्त ने उस नाम के प्रताप से।
सन्मुख प्रभु के जा बसे त्रिलोक में जस छा गया ॥
प्रह्लाद के लागी लगन उस पारब्रह्म के नाम की।
नर सिंह हो दर्शन दिया अपने हृदय से लगा गया ॥
शिवरी जो कहिये भिलनीजिन प्रेम से सुमरण किया।
परमात्मा घर आय उस्के हाथ से फल खा गया ॥
कलिकाल के जो भक्त हैं उन का तो रुतबा है बड़ा।
नरसी की हुंडी द्वारका से सांवरा दिलवा गया ॥
योगी मुनीश्वर देवता उस रूप को खोजत फिरें।
जिस पै हुई उस की दया सतगुरु उसे दरशा गया ॥
छारही कीरत विमल रुत राजसी संसार में।
वो भक्त जन के काज तुलसी राम रंग बरसा गया ॥

तुही ख़ालिक तुही मालिक तुही अन्दर तुही बाहर ।
तुही है आश्रय सब का यही मैंने पिछाना है ॥
तेरे बिन है नहीं कोई जो हो हर हालत में संगी ।
तुझे हरि छोड़ना क्या है गोया दोज़ख़ को पाना है ॥
गुनाह का ज़ख्म है भारी इलाज इस का तुही तो है ।
हकीम हाज़िक तुही है इक तुही कामिल सियाना है ॥

शब्द १७१

मत मारो बेदरदी कारी गैया हूं ॥टेक॥
दूध पिलाया मैंने तुम को है पाला, अरे इस नाते से मैया हूं
दूध दही मैं तुम को देती, भुस की आप खवैया हूं ॥२॥
बैल मेरे हल कूवों में चालें, अरे मैं भारत बोझ खिवैया हूं॥
गरुड़ पुराण में लिखा हुवा है बैतरणी की नैया हूं ॥४॥

शब्द १७२

फैला दो ब्रह्म ज्ञान जगत में ॥टेक॥
सत्य धर्म और वेद पठन में अर्पण कर दो प्राण ।
सत्य ही बोलो झूठ को छोड़ो तज दो हठ अभिमान ॥
नित्य प्रति पांचों यज्ञ रचावो दो दीनों को दान ।
देश देश उपदेश सुनावो गरजो सिंह समान ॥

अग्नि सम जल कहीं ज्वाला गिरि भारे हैं।
शीतल जलाशय जाके निकट बन हारे हैं॥
प्रकाण्ड शिव जाके बल शक्ति के अधारे हैं।
लोक परलोक में जो बन्धु हमारे हैं॥
सुखदेव जनक ईसा मत्त हुये भारे हैं।
गाय गाय जिन्हें नारद मुनि हारे हैं॥

शब्द १६९

ऐसे तुम दीना नाथ पापी परित्राता हो।
दीन दुःखिया पापी दुर्बल सब के मुक्ति दाता हो॥
एक मात्र तुम ही स्वामी और सहारा हो।
सब के जीवन आश्रय स्वमी धर्म के विधाता हो॥
सब के पालन हार प्रभु बुद्धि ज्ञान आशा हो।
बन्धु सखा गुरु तुम ही, तुमही पिता माता हो॥
अमृत आधारा हरि मृत्यु संजीवन हो।
नव जीवन आनन्द और पवित्र जीवन दाता हो॥

शब्द १७०

कहां जाऊं किधर ढूंढूं नहीं कोई ठिकाना है।
तेरे बिन अय प्रभु मैंने नहीं दूजे को जाना है॥

शब्द १६७

प्रेम हो तो श्री हरि का प्रेम होन चाहिये ॥
जो बने विषयों के प्रेमी उन पै रोना चाहिये ॥टेक॥
दिन गंवाये ऐश और आराम में तुमने अगर।
रात को सुमरण हरि का करके सोना चाहिये ॥१॥
बीज बोकर बाग़ के फल खाये हैं तुमने अगर।
वास्ते परलोक के भी कुछ तो बोना चाहिये ॥२॥
मख़मली गद्दों पै सोये तुम यहां आराम से।
सफ़र लम्बे के लिये भी कुछ बिछोना चाहिये ॥३॥
छोड़ ग़फ़लत तुमने यहां पाये हैं ये गिनती के सांस।
भोग में विषियों में फंस इन को न खोना चाहिये ॥४॥
हैंगे हृदय ही में हरि पर भक्ति बिन मिलते नहीं।
दूध से मक्खन जो चाहो तो बिलोना चाहिये ॥५॥

शब्द १६८

ऐसे तुम दीना नाथ काहे को बिसारे हैं।
सिद्ध ला समाधि जाकी ज्योती को निहारे हैं ॥टेक॥
बेल पुष्प लता जाके भृग को पुकारे हैं।
सूर्य चन्द्र तारे जाकी महिमा प्रचारें हैं॥
सागर गम्भीर कहीं बहें नदी नाले हैं।
जाका बिस्तार देख बुद्धि बल हारे हैं॥

चीन अरब काबुल क्या लंका क्या यौरप जापान ।
सन्तों को बेद पढ़ावो छोड़ो मोह अभिमान ॥

शब्द १७३

मेरा राम मिल्या मेरा पीव मिल्या,
सन्तो तन मन खोजी राम मिल्या ॥टेक॥
जब लग मैं तब लग हरि नाहीं
मैं जब मिटी हरि आप हुवा ।
सपना में सखी दोजण सूत्या,
खुल्या नयन सब एक हुया ॥१॥
जन जन से प्रीत करी थी साहब,
मुख से न्हा बोल्या ।
जन से छोड़ करी सत्गुरु से,
साहब परदा जब खोल्या ॥२॥
अचरज एक सुणों साधो,
बूदयाँ में समध समाय रह्या ।
अठसठ तीरथ घट ही में गंगा,
हरदम मनुवां न्हाय रह्या ॥३॥
बिना बीज का बिरछा देख्या,
चौदह तबक में छाय रह्या ।

धरणगगन जन दोनौं छांड़ी,
सब से आगे जाय रह्या, ॥४॥
रहम नाथ धरयां दस्तक,
मोह भरम सब कपट गया
साथ गुलाब मिट्या दुःख तेरा,
अमापर में बास हुवा ॥५॥

शब्द १७४

छबि दिखला जा प्यारे मोहना,
मैंनू बंशी दी तान सुनाजा ॥टेक
तैंनूं ब्रजदीयां नारियां प्यारियां वे,
ओत्थे डुड्डियां कुब्बियां तारियां वे ।
कभी भुल्ल के पंजाब बिच आजा मोहना ॥१
तैंनूं मेरी जेइयां बहतेरियां वे,
पर मैंनूं इक्क ठेंगा टेरियां वे ।
मेरी ततड़ी दी प्यास बुझाजा मोहना ॥२
तू घर आ मेरे ब्रज बासिया वे,
बन्दी तेरे दरश दी प्यासियां वे ।
ऐसी प्यासी नू पानी पिलाजा मोहना ॥३
मेरे ऐबों पै रुखना दे साइयां वे,

मेरी माफ कर सब ही बुराइयां वे ।
चरण दास नू पार लगा जा मोहना ॥४॥

शब्द १७५

आजारे मोहन आजा लीला मय लीला दिखा जा ॥टेक
शुभ गीता का ज्ञान सुना जा,
कर्म वीर बनना बतला जा वीणा ध्वनि सुना जा ॥
अभिमानी का मान घटा जा, बिरंकुशों की शानघटा जा ।
विमल ज्ञान भण्डार लुटा जा, प्रेम पीयूष पिला जा ॥२
भारत को स्वातन्त्र्य दिला कर,
दास प्रथा का अन्त करा कर ।
मातृ भूमि को धीरज देकर,
कुछ तो दुख मिटा जा ॥३
भीख मांगना भारत छोड़े, पाप कर्म से मुख को मोड़े ।
सत्य धर्म से नाता जोड़े, जीवन ज्योति जगा जा ॥४
गोकल बृन्दावन में आकर, दधि माखन का चोर कहा कर
दूध दही का स्रोत बहा कर, ऊधम फेर मचा जा ॥५
वह प्राचीन उमंग नहीं है निर्मल प्रेम तरङ्ग नहीं है ।
सच्चा सुख दिखता नहीं है, किंचित् दया दिखा जा ॥६
मांगे हम लक्ष्मी मत देना, यश वैभव मांगे मत देना ।

केवल मंजुल रूप दिखा कर, किंचित हृदय जुड़ा जा ॥७
माधव जो तू नहीं आवेगा, इस प्रकार जो तरसावेगा ।
निश्चय ही तू पछतावेगा, प्रणयी नेह निभाजा ॥८

शब्द १७६

कुटुम्ब तजशरण राम तेरी आयो ।
तज घर लंक महल और मन्दिर नाम सुनत उठ धायो ।टे०॥
भरी सभा में रावण बैठयो चरण प्रहार चलायो ।
मूर्ख अन्ध कह्यो नहीं माने बार बार समझायो ॥१॥
आवत ही लंका पति कीनों हरि हंस कण्ठ लगायो ।
जन्म जन्म के मिटे पराभव राम दर्श जब पायो ॥२॥
हे रघुनाथ अनाथ के बन्धु दीन जान अपनायो ।
तुलसीदास रघुवर की शरणा, भक्ति अभय पद पायो ॥३

शब्द १७७

भजो राधे कृष्णा राधे कृष्णा राधे गोविन्द ॥टेक॥
केशोजी कल्याण गिरि धरण छबीले लाल ।
मदन मोहन श्री वृन्दावन चन्द ॥१॥
देवकी कोछय्या वलभद्र जी को भय्या लाल ।
जाके मुख देखे ते मिटत दुख द्वन्द ॥२॥

ब्रज पति ब्रजराय सन्तन सदा सहाय ।
मुरली धरन नैना देखे ते आनन्द ॥३॥
जादों पति जानो राज सूरन के सारे काज ।
याहि धुनि गावें स्वामी परमानन्द ॥४॥

शब्द १७८

श्रीमन्नारायण नारायण नारायण ॥टेक॥
चार बेद अरु भगवत गीता तुलसीदास जी की रामायण ॥
जाको नाम लेत अघ नासत काम क्रोध भये जारायण ॥२॥
अजामेल गज गणिका तारे, नाम लेत भये पारायण ॥३॥
क्रीट मुकुट मकराकृत कुण्डल शंख चक्र गदा धारायण ।३।
शिवरी के फल रुचि २ पाये, भक्त सुदामा तारायण ॥५॥

शब्द १७९

हो नाथ म्हारो कांई बिगरेगो नाथ जी ।
हो मेरे स्वामी लाजैगो बिरद तिहारो ॥ टेक
औरां के पति एक है मैं पांच पत्यां की नारि जी ।
उन पांचों नै त्याग दई हूं थे मत त्यागो बनवारी ॥१
कैरू कपट रच्यो दुर्योधन मन में यही तो विचारी जी ।
जीत लिए पांचों पाण्डव अदी द्रोपदी नारी ॥ २

केश पकड़ कर ल्यायो सभा में,
त्रास तो दिखायो मोहे भारी जी ।
दुर्योधन वद नीति भयो है देखन चाहे उघारी ॥ ३
अबतक नाथ मोरो कछु नहीं बिगरो द्रोपद दीन पुकारीजी।
सहाय करो प्रभु थे भगतां की कहां गयो बेर तो हमारी ४
गद २ बैन नैन जल छायो कृष्ण ही कृष्ण पुकारी जी ।
फिर आवोगे लाज मरोगे दासी को देखोगे उघारी ।
सुन बिनती प्रभु आय गए तब नख पर गिरवर धारी जी।
चीर में प्रवेश भयो है खैंचत खैंचत हारी ॥ ६
महा भारत में कथा लिखी है श्री वेदोव्यासजी उचारी जी।
कहै कालूराम सुनो भाई धन्ना आ पहुंचे बनवारी ॥ ७

शब्द १८०

ऊधो अब नहीं श्याम हमारे ॥ टेक
मधु बन बसत बदल से लीने माधो मधुप तिहारे ॥ १
इतनेही दूर भए कछु और ही जो जोई मगु हारे ॥२
कपटी कुटिल काक कोयल ज्यों अन्त भए उड़ न्यारे ॥३
रस ले भंवर जाय स्वारथ हित प्रीतम चित न बिसारे ।
सूरदास तिन सैं का कहिए जो तन हुं मन कारे ॥५

शब्द १८१

ऊधो मन तो नहीं हैं दस बीस
एक मन को लै गयो सांवरो कौन भजै जगदीश ॥टेक
भई अति शिथल सभी माधव बिन जैसे देह बिन शीश ।
श्वास अटक रहे आशा लागि जीवहू कोटि बरीस ।
तुम तो सखा श्याम सुन्दर के सकल योग के ईश ।
सूरदास रसिक की बतियां पुरवो मन जगदीश ॥

शब्द १८२

एक रंग महल में आव कि निर्गुण सेज बिछी ॥ टेक
जहां त्रयगुण बिन निर्वाण जहां नहीं सूर शशी ॥
जहां हिल मिल के सुखमान मुक्ति की होय हंसी ॥
जहं पिय प्यारी मिलि एक कि आशा दुई नशी ।
जहं चरणदास गलतान कि शोभा अधिक लसी ॥

शब्द १८३

सुन सुरत रंगीली हे कि हरिसा यार करो ॥
जब छूटे विघ्न विकार कि भव जल तुरत तरो ॥
तम त्रयगुण छैल बिसारी गगन में ध्यान धरो ।

रस अमृत पीवो हे कि विपदा सकल हरो ॥
करि शील संतोष शंगार क्षमा की मांग भरो ।
अब पांचों तजि लगवार अमर घर पुरुष वरौ ॥
कहैं चरणदास गुरु देखि पिया के पांव परो ॥

शब्द १८४

तुही एक अनेक भयो है प्रभु जी अपनी इच्छा धार ।।टेक
तुही सिरजे तूही पाले तूही करे सहार ।
जित देखूं तित तूही तू है तेरा रूप अपार ॥१
तूही रामनारायण तूही तूही कृष्ण मुरार ।
साधों की रक्षा के कारण युग युग ले अवतार ॥१
तुही आदि अरु मध्य तुही है अन्त तेरो उजियार ।
दानव देव तुम ही से प्रकटे तीन लोक विस्तार ॥ ३
जल थल में व्यापक है तूही घट घट बोलन हार ।
तो बिन और कोन है ऐसो ज्यासों करूं पुकार ॥४
तूही चतुर शिरोमणी है प्रभु तूही पतित उधार ।
चरणदास सुखदेव तूही है जीवन प्राण अधार ॥५

प्रर्थना

[illegible] दया निधे ।टेक

देहि निज पद पद्म भक्ति तारया शुभवाम्बुधे ।।
यादवाभि जनेन पूर्ण नाविता वसुधा त्वया ।।
नाशिता शिशुपाल कंसजरा सुताद्य सुरामृधे ।।
त्वद्वियोग मवाप्य भारत भूमि रधुना पीड़िता ।।
पात्रता मुपयास्यतीश कदा तवानुग्रहविधे ।।

प्रार्थना

हे विभो आनन्द सिन्धो मेच मेधा दीयताम्।
यच्च दुरितं दीन बन्धो तच्च दूरं नीयताम् ।।
चञ्चलानि चेन्द्रियाणि मानसं मे पूयताम् ।।
शरणं याचे तावकीनं सेवक अनुगृह्यताम् ।।
त्वयि च वीर्यं विद्यते यत् तच्च मयि निधीयताम् ।।
याच दुर्गुण दीनता मयि सातु शीघ्र क्षीयताम् ।।
शोर्यं धैर्यं तैजसं च भारते चंक्रीयताम्।।
हे दयामय अयि अनादे प्रार्थना मम श्रूयताम् ।।

प्रार्थना

भगवन् त्वदीय भक्ति मनसा सदा स्मरेयम् ।।
वेदोक्त धर्म कार्यं नक्तन्दिनं विधेयम् ।। १।।
संगः सदा स[illegible]

सद्भावनामृषीणां स्वान्ते सदा भरेयम् ॥ ३ ॥
रोगा हरन्ति देहं प्रबलाः शरीर मध्ये ।
ब्रह्मचर्य मौषधंच पेय सदा वरेण्यम् ॥
बाल्ये स्मूल्य वेला खेलासु नाप्नेया ।
ज्ञानं सदा वरेयं धर्म सदा चरेयम् ॥४

प्रार्थना

वन्दे मुकुन्द देवं धृतया दवेन्द्र देयम् ॥ १
जनकेन कंस भयतो नीतं तु गोप गेहम् ॥२
खल धेनुकाव कारिं व्योमासुरादि कालम् ॥३
वंशी विभूषितोष्ठ हृन्मानसे मरालम् ॥४

प्रार्थना

भगवन्त मनन्त मजं भज रे,
मनसा विषयेषु रतिं त्यजरे ॥ टेक॥
सुतदार धनादि विहाय चलं,
गुरु मात्म विदं शरणं ब्रज रे ॥१
श्रृणु शास्त्र रहस्य कथा विमला,
हृदये गत मोह मलं मृजरे ॥ २
निखिलं जगदेतदवेहि मृषा,
परमात्मनि नित्य मतिं सृजरे ॥ ३
परि हाय मनो भ्रम जाल मिदं,

हरिमेक मुदारमति यजरे ॥ ४

शब्द १८५

श्याम का संदेशा ऊधो पाती लेके आयो री ॥ टेक
पाती तो उठाय लीनी छाती सों लगाय लीनी ।
घूंघट की ओट देके ऊधो समझायो री ॥ १
बसती उजाड़ दीनी उजड़ी बसाय लीनी ।
कुब्जा पटरानी कीनी मोहे ना सुहायो री ॥ २
सूर श्याम जू के आगे ऐसे जाय कहियो ऊधो ।
जीवत खसम किन भसम रमायो री ॥ ३
कहा करूं सूनो यह गोकुल हरि बिन न सुहायो ।
सूरदास प्रभु कौन चूकते श्याम सुरत बिसरायो री ।४

शब्द १८६

बाणा बदलैं सौ सौ बारैं बदलैं बाण तो बेड़ा पार ॥टेक॥
सोना चांदी चौंच मंढ़ाई किया हंस की लार ।
कार्गा बाण कुबाण न छोड़ें इत सत्संग लाचार ॥१
युग युग सींचो दूध अरंड को लागैं नाहिं अमार ।
चूर चूर कर डारो चन्दन तजै नहीं महकार ॥
सज्जन के मुख अमी बसंत है जब बोलैं तब प्यार ।

दुर्जन का मुख बन्द कर रखियो भही भरे अङ्गार ॥३
अपनी करणी आप कहत हूं नहीं और सिर भार ।
शम्भुदास वा घड़ी धन्य जब सुमरया सिरजन हार ॥४

शब्द १८७

हरि को सुमर संकट हरण ॥ टेक ॥
कोटि कष्ट निवार तारण जगपति पोषण भरण ।
भक्ति पूर्ण देखि निश्चल अननव बांधो परण ॥१
अग्नि में प्रह्लाद राख्यो दियो नाहीं जरन ।
गिरि शिखर से डारि दीन्हों लगो करुणा करण ॥२
दीन जानि संभार लीन्हों कियो ठाढो धरन ।
खम्भ बांध्यो खंग काढ्यो दुष्ट लागो अरन ॥ ३
अब बता तेरो राम कित है गहो वाकी शरण ।
ढ़ीठ हो प्रह्लाद भाष्यो डारि शंका डरन ॥ ४
मोमे तोमे खड्ग खम्भ में मध्य नारि नरन ।
खम्भ फाड़ कर हुए प्रगट धरो नरसिंह वरन ॥५
सोहि गुरु शुकदेव कहिया सेव सोई चरन ।
चरणदास उपासना दृढ़ होय तारण तरन ॥ ६

शब्द १८८

मधुकर कौन मनायो माने ॥टेक

अविनाशी अति अगम अगोचर कहा प्रीति रस जाने ॥१
सिखवो जाय समाधी की बातें जहां हों लोग सयाने ॥२
हम अपने ब्रज ऐसे ही बसैं हैं विरह वाय बौराने ॥३
जाके तन धन प्राण सूर हरि मुख मुसकान बिकाने ॥४

सवैया।

जो मन नारी की ओर निहारत,
तो मन होत है ताहि को रूपा।
जो मन काहू से क्रोध करे,
तब क्रोध मयी हो जाय तद्रूपा।
जो मन माया ही माया रटे नित,
तो मन डूबत माया के कूपा॥
सुन्दर जो मन ब्रह्म बिचारत,
तो मन होत है ब्रह्म स्वरूपा।

ज्ञानो का विनोद।

कहते जिसे हैं ईश वह है मात्र मेरी भावना।
मैं ही न हूं तो होय किस से ईश की संभावना॥
प्राणी अनेकों जाति के मेरे ही सब आकार हैं।
व्यापार लाखों प्राण के मेरे ही तो व्यापार हैं॥ १
सर्वत्र मैं ही व्याप्त हूं कहीं बिम्ब कहीं आभास हूं।

मैं दर्श दृष्टा दृश्य हूं मैं दूर मैं ही पास हूं ॥

सत् या असत् कुछ या न कुछ जो कुछ कि है मैं हूं सभी।
हो दिव्य दृष्टि गुरु कृपा से दीखता हूं मैं तभी ॥ २

मैं ही कहीं पर सूर्य हूं मैं ही कहीं अणु रूप हूं।
सागर बनूं मैं ही कहीं कहां मैं ही बिन्दु स्वरूप हूं ॥

हूं चर कहीं कहीं हूं अचर कहीं ज्ञान कहीं अज्ञान मैं
संसार दृष्टि से छुपा आता नहीं हूं ध्यान मैं ॥

मुझ गुप्त मणि की खान में जग दीखकर छिप जाय है
हर एक पुरजा हो अलग तब यन्त्र नहीं कहलाय है ॥

सब भेद तत्क्षण खुल गया पढ़ते ही आतम की कथा
जिसको समझता था बड़ा सो वास्तविक कुछ भी न था।

सच्चित् तथा आनन्द में छिप सा गया था भूल से।
कहीं नाम में कहीं रूपमें ढक जाय ज्यों रवि धूल से।

उतरी अविद्या राक्षसी अब आप को मैं जानता।
जैसे गले का हार त्यों हीं प्राप्त प्राप्ति मानता ॥ ५

जब बाह्य दृष्टि छूट के दृष्टि हुई अन्तर मुखी।
तब आप को मैंने लखा स्वच्छन्द सुखि से भी सुखी ॥

एकान्त में बैठा हुआ भी वाक्य सुन कर धारता।
चुप चाप हूं जिह्वा बिना तोभी वचन उच्चारता ॥ ७

मित्रो ! कभी मत पूछना मैं जीव हूं या ईश हूं।

मैं बन्ध मैं ही मोक्ष हूं मैं जीव मैं विश्वेश हूं।
मैं बन्धता मैं ही बन्धू मैं छूटता मैं छोड़ता ॥
देता हूं उत्तर सर्व को नहीं मुख किसी से मोड़ता ॥७
ईश्वर बनूं ऐश्वर्य से सम्बन्ध कुछ रखता नहीं।
हूं जीव पर जीवत्व पाओगे न तुम मुझ में कहीं।
मैं बन्ध में बन्धता नहीं नहीं मोक्ष पाकर मुक्त हूं ॥
मेरे किये हों कर्म सब नहीं कर्म से संयुक्त हूं ॥ ८
चलता बहुत ही हूं अहा! फिर भी नहीं जाता कहीं।
बनता बिगड़ता दीखता बनता बिगड़ता हूं नहीं ॥
मैं देख कर नहीं दीखता हूं देखता नहिं दीखता।
आश्चर्य की सीमा नहीं सब जान करके सीखता ॥९
मैं जान कर नहीं जानता खाऊं न कुछ खाऊं सभी।
व्यापारि हूं सब से बड़ा व्यापार नहीं करता कभी।
मैं हूं तथा हूं भी नहीं दोउ मध्य हूं मैं भासता ॥
कौशल्य! मुझको जानता सो मैं ही होय प्रकाशता।

इसका न मुझको ज्ञान था ।

नहिं ईश मैं नहिं जीव ही नहिं ज्ञान नहिं अज्ञान था ।
नहिं देव दानव नहिं पशु मनु की न मैं सन्तान था ।
सब ही उपाधी से रहित आनन्द घन विज्ञान था ॥
आश्चर्य है ! आश्चर्य है ! इस का न मुझ को ज्ञानथा ॥१
अन्तःकरण दर्पण अलौकिक मध्य मूरति मोहनी ।
देखी महा आश्चर्य मई थी बिम्ब जिस की सोहनी ॥
सुख दुख न उस में लेश था कहीं कुछ जगतका भान था
कारण न था नहिं कार्य ही इसका न मुझको ज्ञान था ।
नेत्रों बिना मैं दृश्य द्रष्टा दर्शनों से युक्त था ।
जो भी जगत चारों दिशा मम चक्षु वों में गुप्तथा ॥
जग रूप अपना देख कर मैं आप ही भयमान था ।
था सर्प रस्सी का बना इसका न मुझ को ज्ञान था ॥२
सब मैं ही अपना आप हूं मिथ्या योग वियोग है ।
प्रीतम प्रिया का भाव कहं जब नित्य ही संयोग है ॥
यह भाव बनते थे तभी मैं जब तलक अनजान था ।
थे मन घडत ये भाव सब इस का न मुझको ज्ञान था ।
अन्त बना कर आरसी जब रूप देखा आपना ।
... निर्मल मिट गई सब कल्पना ॥

मैला समझ मैं था दुःखी मिथ्या ही यह अनुमान था ।
हत्या लगी निष्पाप को इस का न मुझको ज्ञान था ।
किस भान्ति करिये योग युक्ती ब्रह्म बतलाता न था ॥
है भेद क्या यह शास्त्र भी कुछ भेद जतलाता न था ।
थी आड़ मेरे बीच जो मेरा ही वह अभिमान था ॥
मन भूत था शिर पर चढ़ा इसका न मुझको ज्ञान था ।
भूला स्वयं मैं आप को ऐसा महा मतिमन्द था ।
था जानकर अंजान में आंखों सहित भी अन्ध था ॥
घूमा अन्धेरे में बहुत अत्यन्त ही हैरान था ।
नहीं सूर्य छिपता धूल से इसका न मुझको ज्ञान था ॥ ७
झूठे सलिल के हित दौड़ा किया प्यासा मरा ।
ढूंढा असत् में सत्य को कारज नहीं कुछ भी सरा ॥
था मैं नशे में बावला यद्यपि महा गुणवान था ।
क्या काच है क्या है मणी इस का न मुझ को ज्ञान था ॥
करि धारणा पुनि ध्यान वर्षों योग के पीछे पड़ा ।
उपवास करि भूखों मरा तप में तपा जल में सड़ा ॥
जब जब लड़ा तब तब गिरा यद्यपि महा बलवान था ।
पर्वत छिपा है राई में इसका ना मुझको ज्ञान था ॥८॥
बहु काल पीछे गुरु कृपा कौशल्य ? जाना आप को ।
तब भर्म सारा खुल गया पाया न फिर संताप को ॥

मैं सत्य चित नित एक रस सर्वत्र पूर्ण समान था।
वहि ब्रह्म वहि मैं वहि जगत् इसका न मुझको ज्ञान था॥१॰

आत्म चिन्तन।

सुख साध्य चिन्तन आत्म का,
सनकादिक मुनि का इष्ट है।
तज आत्म जो विषयन भजे,
सो दुष्ट पाता कष्ट है॥
सब भाव तज परमात्म भज,
यह ही परम पुरषार्थ है।
आसक्ति भौतिक भाव में,
नर जन्म खोना व्यर्थ है॥ १॥
इस के सिवाय नहीं अन्य कोई,
मुक्ति का आधार है।
शास्त्रों पुराणों वेद का,
उपदेश यह ही सार है।
योगी यती मुनि सिद्ध गण,
सब का यही सिद्धान्त है॥
जो आत्म को नहीं भूलता,
वही सन्त है वही शान्त है॥ २

संसार सागर तरण हित,
गुरु पद जिहाज बनाइये।
वैराग्य और अभ्यास की,
सीढी बना चढ जाइये॥
मन्लाह सतगुरु रूप पर,
विश्वास पूर्ण लाइये।
तन मन बचन तिहूं अर्प कर,
भव सिन्धु से तर जाइये॥ ३॥
जो मूढ नर अज्ञान बश,
घृत हेतु वारि बिलोवता।
नहिं हाथ उस के आय कछु,
आयुष्य यों ही खोवता॥
तैसे ही नर जो आत्म तजि,
अनआत्म में मन लावता।
भटके अनेकों योनियों में
दुःख अनेकों पावता॥ ४॥
मति हीन कोई कीर्त्ति हित,
बहु पाप करि मरि जाय है।
तन हेतु कोई मूर्ख जन,
निज देह व्यर्थ गलाय है।

इस भ्रान्ति नर अविचार से,
बहु कल्प कष्ट उठाय है।
दिन रात दीजै दान बहु विधि,
लौट जग में आय है।
काशी चिराओ शीश छुट्टी,
मृत्यु से नहिं पाय है॥
हिन्दु ज्ञान अन्य उपाय से,
नहिं भय मरण का जाय है।
भय सर्प का मिटता जभी,
जब रज्जु दृष्टि आय है॥
हो लक्ष जिस को आत्म का,
नहिं काल उस को खाय है।
नहिं पाप पुण्य लगें उसे,
नहिं लेश दुःख उठाय है।
देवादि जोड़ें हाथ सब,
नहिं शत्रु से अपमान हो॥
पाताल नभ जल थल जहां,
जावे तहां सन्मान हो॥ ७॥
संकल्प जिस का सिद्ध हो,
फिर कार्य उस का क्यों रुके।

जिस को मिले चिन्तामणी,
सो निर्धनी क्यों हो सके।
नव निद्धि आठों सिद्धियां,
आगे खड़ी सेवें उसे॥
जो आप पूर्ण काम हो,
होवे कमी फिर क्या उसे॥८॥
जो हो शरण विश्वेश की,
सो क्यों न पूर्ण काम हो।
जब रूप होवे राम का,
तब आप ही आराम हो।
विश्वास नहिं विश्वेश का,
बहु कामना मन मांय हैं।
हत भाग्य नर भव कूप गिर,
जन्मे मरे पछिताय हैं॥९॥
सब काम तज परमात्म भज,
कौशल्य जो सुख चाहता।
बड़ पुण्य से नर तन मिला,
क्यों व्यर्थ उसे गमावता।
जिस ने भजा परमात्म को,
वहि साधु है वहि सन्त है।

शूरा वहि पुरा वहि,
निर्भय वहि निश्चित है ॥१०॥

अवधूत का पन्थ ।

द्विज पन्थ मेरा कुछ नहीं क्यों पन्थ मुझ से पूछता ।
मैं आप ही जब मर मिटा तब पन्थ से क्या भासता ।
जो लवण पानी में मिला सो लवण पानी होगया ।
अवधूत नहीं जब आप ही अवधूत का फिर पन्थ क्या ॥ १ ॥
जीते ही जी जब मर गया निर्णय हुवा मुझ को तभी ।
हैं साध्य साधक एक ही, नहिं भेद उन में लेश भी ।
माया रचित हैं पन्थ सब क्यों पन्थ का झगड़ा किया ।
अवधूत नहीं जब आप ही अवधूत का फिर पन्थ क्या ॥२॥
सब पन्थ कल्पित एक में उस एक के ही जानिये ।
झूठा न झगड़ा कीजिये अद्वैतता पहिचानिये ।
तर्कें कुतर्कें त्याग दो अवधूत का मानो कहा ।
अवधूत नहीं जब आप ही अवधूत का फिर पन्थ क्या ॥३॥
इस लोक में नहिं काम कुछ पर लोक की चिन्ता नहीं ।
सब ठौर मैं ही व्याप्त हूं आना न जाना है कहीं ।
जिस ने अपनपा खोदिया उसने सभी कुछ पालिया ।
अवधूत नहीं जब आप ही अवधूत का फिर पन्थ क्या ॥४॥

संशय सभी जाते रहे जाता रहा सब मैं पना ।
जो था अणु से विभु हुवा जो बिन्दु था सिन्धू बना ।
नहिं तू रह्या नहिं मैं रह्या जो सत्य था सो ही रह्या ।
अवधूत नहीं जब आप हीअवधूत का फिर पन्थ क्या ॥५

मैं और हूं तू और है परदा उठा इस भेद का।
आंखें खुलें इस विज्ञान की तब अर्थ जाने वेद का ।
है ब्रह्म वेत्ता ब्रह्म ही सब पन्थ से झूठा भया ।
अवधूत नहिं जब आप ही अवधूत का फिर पन्थ क्या ॥६॥
तू आप ही पुरुषार्थ कर क्यों दूसरे से बूझता ।
अपना पराया भूल जा सन्मार्ग तत्क्षण सूझता ।
सन्मार्ग जब निश्चय हुवा तब पन्थ पन्थाई गया ।
अवधूत नहिं जब आप ही अवधूत का फिर पन्थ क्या ॥७॥
इस मैं पने के दोष से आंखें न अन्धी कीजिये ।
जो है प्रकाशक सर्व का उस को छिपा मत दीजिये ।
खोजा नहीं आपा कभी आयु बृथा ही खो दिया ।
अवधूत नहीं जब आप ही अवधूत का फिर पन्थ क्या ॥८॥
जो विष्णु भक्ति कीजिये विष्णु स्वयं बन जाइये ।
दुर्गा तुम्हारी इष्ट है दुर्गा ही हो सुख पाइये ।
शिव को भजो शिव रूप हो यह आदि मत नहीं है नया ।
अवधूत नहिं जब आप ही अवधूत का फिर पन्थ क्या ।९।

सेवा हि जिस को इष्ट है वह इष्ट नहीं है दुष्ट है
सेवक बनादे आप सा वह इष्ट हमको इष्ट है
कौशल्य मिथ्या शिष्य गुरु अवधूत है सत्भाषिया ।
अवधूत नहिं जब आपही अवधूत का फिर पन्थ क्या ।१०

कविता ।

यह कौन कहता है कि तू माता पिता से जन्य है ।
सब कार्य कारण से परे निःसंग तू चैतन्य है ।
इच्छा तुझे नहीं शोभती तू नित्य पूर्ण काम है ।
नहिं लेश तुझ में मोह का निर्मोही तेरा नाम है ॥१॥
यह कौन कहता है कि तू अपवित्र है परतन्त्र है ।
पावन परम अवयव रहित अक्षर सदा निज तन्त्र है ।
भय क्यों किसी से मानता तू वस्तुतः स्वच्छन्द है ।
सुख को कहां है ढूंढता तू आप आनन्द कन्द है ॥२॥
यह कौन कहता है कि तू तो काल के है गाल में ।
है काल का भी काल तू अविनाशी तीनों काल में में।
ये देश वस्तु काल अरु जो कुछ उदय या, अस्त है ।
सब का अधिष्ठाता तुही तुझ में सभी अध्यस्त है ॥३॥
है शक्ति तुझ में बहुत जिन की न संख्या हो सके ।
यह दृश्य है जो दीखता सब में ही तेरा राज है ।

तेर सिवा उन का कभी नहिं पार कोई पा सके।
चिन्ता तुझे किस बात की तू सर्व का सिरताज है ॥४॥
जो आप को बुद्ध बुद्ध समझ कर ब्रह्म सागर जानता।
सो करि ही वृथा कल्पना दूजा समझ भ्रम मानता॥
अब खोल आंखे देखता नहीं भेद रंचक पाय है।
पानी सिवा नहीं अन्य कुछ भी देखने में आय है ॥५॥
सागर तुही बुद्ध बुद्ध तुही लहरें तुही बनजाय है।
तू एक ही बहु रूपिये सम रूप बहु दिखलाय है।
अत्यन्त ही है पास तू फिर भी बहुत ही दूर है।
चर और अचर इस विश्व में सर्वत्र ही भर पूर है ॥६॥
मन इन्द्रियें अरु बुद्धी को लगता नहीं तेरा पता।
उन सर्व से है तू परे उन की क्रिया को जानता॥
नहिं बन्ध थी तुझ में कभी नहिं मुक्त अब तू है भया।
तू तो सदा ही मुक्त है धोका तुझे था हो गया ॥७॥
बादल अनिल चन्दा रवि भय मानि तेरा घूमते।
यमराज तेरे दास हैं तव चरण सादर चूमते।
ऋद्धि नहीं अब इष्ट है सिद्धि नहीं कुछ चाहिये
मिथ्या सभी तेरे सिवा क्यों चित्त को भटकाइये ॥८॥
तू जो उपासना तप करे क्या हाथ तेरे आयगा।
है ध्येय ध्यानी एक ही क्या ध्यान से फल खायगा॥

ब्रह्मा तुही सृष्टि रचे विष्णु तुही जग पालता ।
तुही भयंकर रुद्र बनकर विश्व को है घालता ॥६॥
था जिस किसी को ढूंढता सो है तुही मत खिन्न हो ।
दे ढूंढने को त्याग अब तू स्वस्थ चित्त प्रसन्न हो ।
ज्ञानी जिसे हैं जानते योगी जिसे हैं ध्यावते ॥
कौशल्य सो है आप तू श्रुति सन्त कोविद गावते ॥१॥

शब्द १८९

जतन बिन मिरगा न खेत उजारा ॥टेक॥
पांच मिरग पच्चीस मिरगनी तामें तीन चिकारा ।
अपने अपने रस के भोगी चुग रहे न्यारा न्यारा ॥१॥
उठ के झुंड मृगा के आये बैठे खेत मँझारा ।
हो हो करत बालि ले भागे मुख बाये रखवारा ॥२॥
मारे मारे टरे नहीं टारे विडर नाहीं विडारा ।
अति हि प्रपंच महा दुःख दाई तीन लोक पचि हारा ॥३॥
ज्ञान का भूला सुरती का चूका गुरु शब्द रखवारा ।
कहै कबीर सुनो भाई साधो विरले भले सहारा ॥४॥

शब्द १९०

सभी तो मिल राम भजो नर नारी ॥टेक॥
जन प्रह्लाद पिता तज दीया भरत तजी महतारी ।

हरि के भजन स गणिका तर गई तर गई गौतम नारी ॥
भवसागर की लहर कठिन है किस विधि उतारेंगे पारी ।
मीरां के प्रभु गिरधर नागर हरि के चरण बलिहारी ॥

शब्द १९१

कन्हैया दुःख हरैया जी तुम ही से लो लगायेंगे ॥टेक॥
इस के सब से मन अपना कि वृन्दावन को जायेंगे ।
सुनी है यह खबर तुमरी कि वृन्दावन में रहते हो ॥
बहुत बेचैनी है मन को दर्श जब तक न पायेंगे ।
तुह्मारी माया तो देखी मगर तुम को न देखा है ।
जो होजावें दर्श तुमरा तो निश्चय मोक्ष पायेंगे ॥
वह वंशी भी सुना दीजे भरी जादू जो है तुम पैं ।
मिटावो सब यह अभिलाषा हम तेरा गुण गायेंगे ॥
बुझी दुःख के हरैया हो तुह्मारे हाथ है डोरी ।
भला बांके बिहारी तुम सिवा हम किस पैं जायेंगे ॥

शब्द १९२

फिर आकर के इस भारत में,
निज सांवरी सूरत दिखा तो सही ॥टेक॥
वो अगाध प्रभाव भरी वंशी,
यमुना तट नेक बजा तो सही ॥

गो धूमरी धूसरी रोती खड़ी,
जिन्हें रोज चराते थे ले के छड़ी।
उन पै है पड़ी तकलीफ बड़ी,
उसे दौड़ के शीघ्र हटा तो सही ॥
बिन आप के हालत ऐसी हुई,
घृत दूध बिना सब शक्ति खुई।
प्रभु माखन व मिश्री ये दूई,
खिलवा बलबान बना तो सही ॥
हम कायर कूर हैं पाप भरे,
कर्तव्य भी भूल गये सगरे।
अब लेकर के अवतार हरे,
हमे मञ्जुल गीता सुना तो सही ॥
प्रिय माधव मैं कर जोर कहूं,
कबलों करुणा निधि दुःख सहूं।
सही पीर कहांतक मौन अहूं।
अब आकर कष्ट मिटा तो सही ॥

शब्द १९३

दास परे दया लावो रे दयालु देवा दास परे दया लाओ।
संसारी सम्बन्ध छोड़ी जीव आप चरणां जोड़ी।
वारे अविनाशी आवो आवो रे ॥१॥ दया०

आंखों बिन सङ्कट आवे खाड़ों में गोता खावे ।
हूं तो बन बैठो बाओ बावोरे ॥दयालु ॥२॥

शब्द १९४

अय मातृ भूमी तेरे चरणों में शीश नवाऊं ।
मैं भक्ति भेट अपनी तेरी शरण में लाऊं ॥
माथे पै तुम हो चन्दन छाती पै तुम हो माला ।
जीहा पर गीत तुम हो मैं तेरा नाम गाऊं ॥
जिस से सपूत उपजे श्री राम कृष्ण जैसे ।
उस तेरी धूलि को मैं निज शरीर पर चढ़ाऊं ॥
मानी समुद्र जिस की धूली का पान करते ।
करता है मान तेरा उस पीर को मनाऊं ॥
विदेश यान वारे चढ कर उतर गये सब ।
गोरे रहे न काले तुझ को ही एक पाऊं ॥
सेवा में तेरे सारे भेदों को भूल जाऊं ।
बह पूरा नाम तेरा प्रति दिन सुनूं सुनाऊं ॥
तेरे ही काम आऊं तेरा ही मन्त्र गाऊं ।
मन और देह तुझ पर बली दान मैं चढाऊं ॥

शब्द १९५

तैंने नाहक में हीरा सा जन्म गंवाया प्रभु जी की भक्ति बिना । टेक॥

दिन धन्धे में रैन नींद में न कभी हरि गुण गाया खो दिये वृथा दिना ॥ १ ॥
होय निराशी भज अविनाशी छोड़ कपट छल माया मेरे मस्ताने मना ॥ २ ॥
धन माया परिवार प्रभु का क्यों इन में रे भरमाया प्राणि फिरे करता गुना ॥ ३ ॥
पूर्ण ब्रह्म अजर अविनाशी पावन पवन ऐजी प्रभु सब से भिना ॥

शब्द १९६

ऊधो मेरे वह छवि हीये में रही ॥टेक॥
पंच वदन दृग आठ सिंग द्वौ द्वादश चरण सही ॥१॥
चम्पत अष्ट युगल दोऊ भर्ता दोऊ पुरुषन एक तरण गही ॥
वेद परस उठ चले सांवरे नयनन सैन दई ॥३॥
सूर श्याम रवि अंश गये घट पय तज पीवत मही ॥४॥

शब्द १७९

अब तो आंखे खोलो प्यारे अब तो आंखे खो लो रे ॥टे॰
पूर्व दिशा अब अरुण है भई प्रकृति देवी पट बदल रही है ॥
यम ने तम की बांह गही है, छुप कर भाजे तारे ॥१॥
प्रमुदित नलीनी विहंस खिली है, प्रिय समीर से सुरभी

मिली है। अति शोभा मय वन स्थली है, अली गण है गुंजारे ॥२॥
नव जीवन संचार हुवा है, ऐक्य भाव विस्तार हुवा है।
सुख मय सब संसार हुवा है, जागे साथी सारे ॥३॥
ऊषा देवी के दर्शन पा कर हुए प्रफुल्लित सभी चराचर।
तुम क्यों सोये शीश झुका कर, सुध बुध सभी बिसारे ॥४

शब्द १९८

जाऊँ कहां तजि चरण तिहारे ॥टेक॥
काको नाम पतित पावन जग केहि अति दीन पियारे ॥१
कौन देव बरि आई विरद हित हरि हरि अधम उधारे ॥२
स्वग मृग व्याधा पषाण विटप जड़ जवन कवन सुर तारे ॥३
देव दनुज मुनि नाग मनुज सब माया विवश विचारे ॥४
तिन के हाथ दास तुलसी प्रभु कहा अपन को हारे ॥५॥

शब्द १९९

खबर ना या जग में पल की, राम सुमर ले मुकुथ करले
को जाने कल की ॥टेक॥
तारा मण्डल रवि चन्द्रमा जोत झला झल की। दिना

चार की चटक चांदनी ज्यों बिजली चमकी ॥१॥
ये संसार सुपने की माया ओस बूंद जल की। ढलक
जाय कछु वार ना लागे ये माया छल की ॥२॥
ये हंसा देही के भीतर करें खुश्याला दिल की । जब ये
हंसा निकल जायगा माटी जंगल की॥३॥
काम क्रोध मद लोभ निवारो आस तजे फल की।
शील संतोस दया उर राखो कहै कबीर दिल की ॥४॥

शब्द २००

जी अब हरि भूले नाहिं बने ॥टेक
बिपत बिडारन तुम हो मिरधर सुख में मित्र धनं ॥१॥
मैं आधीन हूं कछु नहीं लायक तुम बिन कौन गिने ॥२
सूर स्याम प्रभु बिपत बिडारन व्रज निधि शरण तुम्हें ।३

शब्द २०१

कब हू मिलोगे दीना नाथ हमारे ॥टेक॥
जैसे मिले प्रहलाद भक्त को खम्भ फोड़ हिरनाकुश मारे ॥
जैसे मिले तुम द्रोपद सुता को खैंचत चीर दुशासन हारे ॥
जैसे मिले तुम मीरां बाई को जहर का प्याला अमृत कर डारे
जैसे मिले तुम नरसी भक्त को भात भरन को आप पधारे ॥

सूरदास को कबहू मिलोगे टपटप टपकत नयन हमारे ॥

शब्द २०२

शंकर तेरी जटा में चल धार गंग है ।
उठते हैं बार बार वारि के तरंग हैं ॥टेक॥
गले मुण्ड माल है कानोंमें है कुंडल,
खाने को कन्द मूल फल पीने को भंग है॥१॥
मृग छाल कमर में कसी वृष राज पै चढे ।
मस्तक में चन्द्र की कला बिभूति अङ्ग है ॥२॥
डमरू त्रिशूल हाथ में गिरजा है अंक में ।
त्रिनेत्र भूजा चार कण्ठ नील रंग है ॥३॥
कैलाश में निवास है गण साथ में रहें ।
ब्रह्मानन्द अपने दास सदा के ही संग है ॥४

शब्द २०३

देखन को लाला बारो री यशोदा मय्या ॥टेक॥
मथुरा में हरि जन्म लियो है,
भार ब्रज को तारो री यशोदा मय्या ॥१॥
केशी मारचो कंस पछाड़्यो,
जीत्यो है मल्ल अखारो रीयशोदा मय्या ॥२

कालिदह में कूद पड़यो है,
नाग नाथ लियो कारो री यशोदा मय्या ॥३
औरन पै है लाल चुनरिया,
इन पर कम्बल कारो री यशोदामय्या ॥४॥
चन्द्र सखी भज बाल कृष्ण छवि,
ऐसो है नन्द दुलारो रीयशोदा मय्या ॥५॥

शब्द २०४

गुरु साहिब मेरा बांदी मैं नौकर थारी रहियां हो।
आप ही रखोला जिन में रिहियां ॥टेक॥
एक समय में प्रभु आप पधारे जी ।
पल पल दर्शन हम को दीजे ॥१॥
भव तो सागर में प्रभू डूबन लागी जी।
डूबत पकरी मोरी बय्यां ॥२॥
अधर तखत पै प्रभु आप पधारे जी ।
नित उठ दर्शन हम को दीजे ॥३॥
टीकम सन्त प्रभु खे मजीरे चरणा जी।
गुरु के चरण में लिपटा रहियां ॥४॥

शब्द २०५

ले गयो चीर मुरारी जी मैं कैसे करूं ॥टेक॥

लेकर चीर कदम्ब पर बेठयो हम जल मांहि उघारी जी ।१
तुमरो चीर जभी हम देंगेजल से हो जावो न्यारी जी ॥२
जो हम जल से न्यारी होवें जायगी लाज तिहारी जी ॥३
चन्द्र सखी भज बाल कृष्ण छवि तुम जीते हम हारी जी ।४

शब्द २०६

भज हंसा हरि नाम जगत में जीवन थोड़ा जी।

काया आई पाहुनी हंस आया महमान। पानी का सा बुल बुला थोड़ा सा उन्मान। बना कागज़ का घोड़ा जी ॥१॥
मात पिता सुत बन्धुवा और दुलहनी नार। यहीं मिलै यहीं बीछड़ें यह शोभा दिन चार,बना दो दिन का जोड़ा जी ॥२
सोऊं २ क्या करे सोवत आवे नींद। यम सिरहाने यूं खड़े ज्यूं तोरण वै वींद। खिंचा जैसे ताजी घोड़ा जी ॥३॥
राम भजन की हांसी करते मन में राखे पाप पेट पलनियां। वह चलंगे जूं जंगल के सांप, नेह जाने हरि से तोड़ा जी ।४
हाड़ जले ज्यूं लाकड़ी केश जलैं ज्यूं घास। जलती चिता कूं देख के भये कबीर उदास, नेह जाने हरि से जोड़ा जी ।५

प्रार्थना

आया हूं शरण में नारायण मुझे मुक्ति का द्वार दिखावो प्रभो
तुही तात मात परिवार तुही धन दौलत घर बार तुही।
नहीं और कोई है सगा मेरा नय्या को पार लंघावो प्रभो॥
कभी कर से न पूजा करी तेरी कानों से कथा न सुनी तेरी।
नहीं तीर्थों में जाय करी फेरी जन जान के हाथ बढ़ावो प्रभो।
भव सागर की कछु थाह नहीं कोई आता नज़र मल्लाह नहीं।
विठला के चरणों की जिहाज में भव पार मुझे पंहुचावो प्रभो
कर जोर राम की है विनती मेरे पाप तो नाथ हैं अन गिनती।
है नाम तिहारो पतित पावन निज नाम की लाज रखावो प्रभु॥

शब्द २०७

जागिये रघुनाथ कुंवर पंछी बन बोले॥
चंद-किरण शीतल भई, चकई पिय मिलन गई।
त्रिविध मंद चलत पवन, पल्लवद्रुम डोले।
प्रात भानु प्रगट भयो, रजनी को तिमिर गयो।
भृंग करत गुंज गान, कमलन दल खोले॥
ब्रह्मादिक धरत ध्यान, सुरनर मुनि करत गान।
जागन की बेर भई, नयन पलक खोले॥

तुलसीदास अति आनंद, निरखि के मुखारविंद ।
दीनन को देत दान भूषण बहुमोले ॥

शब्द २०८

आंखयां हरि दर्शन की प्यासी ।
देख्यो चाहत कमल नैन को निशि दिन रहत उदासी ॥
आये ऊधो फिरि आंगन डारि गये गर फांसी ॥
केसर तिलक मोतिन की माल, वृन्दावन के वासी ॥
काहू के मन की को जानता लोगन के मन हांसी ॥
सूरदास प्रभु तुमरे दरस बिन, लेहौं करवत कासी ॥

शब्द २०९

घूंघठ का पट खोल रे, तोहे राम मिलेंगे ॥
घट घट रमता राम रमैया, कटुक वचन मत बोल रे ॥तोहे०
रंग महल में दीप बरत है,आसन से मत डोल रे ॥तोहे०॥
कहत कबीर सुनोभाई साधो अनहद बाजत ढोल रे ॥तोहे०

सवैया

जो यह निर्गुणध्यान न है तौ, सगुणईश करि मन को धाम

सगुण उपासनहू नहिं ह्वै तौ, करि निष्कामकर्म भजि राम ॥
जो निष्काम कर्म हू नहिं ह्वै, तो करिये शुभ कर्म सकाम ।
जो सकाम कर्महुनहीं होवै, तौ शठ बराबर मरिजाम ॥

सवैया

ध्यान अहंग्रह प्रणवरूपका, कह्यो सुरेश्वर श्रुति अनुसार ।
अक्षर प्रणव ब्रह्ममयरूपसु यों अनुकूलव निजमति गति धार
ध्यानसमान आन नहिं य के, पंचीकरण प्रकार विचार ।
जोयहकरत उपासन सो मुनि, तुरितनशै संसार अपार ॥

सवैया

जाके हिये ज्ञान उजियारो, तम अंधियारो खरो विनाश ।
सदा असंग एक रस आतम, ब्रह्म रूप सो स्वयं प्रकाश ॥
ना कछु भयो न है नहिं ह्वै है, जगत मनोरथ मात्रविलास ।
ताकी प्रप्तिनिवृत्तिन चाहत, ज्यों ज्ञानी के कोउ न आस ॥
देखै सुनै न सुनै न देखै, सब रस गहे रु लेत न स्वाद ।
सूंघि परशि परशै न सूंघै, बैन न बोलैं करैं विवाद ॥
ग्रहि न ग्रहै मल तजै न त्यागै, चलै नहीं अरु धावत पाद ।
भोगै युवति सदा संन्यासी, शिवलखि यह अद्भुत संवाद ॥

सवैया

निज विषयन में इन्द्रिय वर्तें, तिनते मेरो नाहीं संग।
मैं इन्द्रिय नहीं मम इन्द्रिय नहिं, मैं साक्षी कूटस्थ असंग ॥
त्याग हु विषय कि भोग हु इन्द्रिय, मोकूं लगै न रँचक रङ्ग।
यह निश्चय ज्ञानी को जाते, कर्त्ता दीखे करे न अङ्ग ॥

सवैया

पंचकोशते आतम न्यारो, जानि सु जानहु ब्रह्मरूपा।
ताते भिन्न जु दीखै सुनिये, सो मानहु मिथ्या भ्रमकूप ॥
मिथ्या अधिष्ठान न बिगारै, स्वप्न भीख व दरिद्री भूप।
सब कछु कर्त्तातऊअकर्त्ता, तव अस अद्भुत रूप अनूप ॥

मुमुक्षु का कर्तव्य।

जो पाऊहैं अविवेक के मत संग उन का कीजिये।
संयोग वश यदि सँग होतो त्याग सत्वर दीजिये ॥
भाषण अधिक अच्छा नहीं, नहिं निष्प्रयोजन भाषिये।
नहिं खिल खिला हंसिये कभी, मुख बँद अपना राखिये ॥
व्यवहार या परमार्थ का जो कार्य तुम को प्राप्त हो।
उत्साह से सब कीजिये तन मन लगा चित स्वस्थ हो ॥

सत् रूप निज उद्देश्य क्षण भर विस्मरण मत कीजिये ।
सत् की विरोधी वृत्ति आवे तो न आने दीजिये ॥

निन्दा पराई से कभी जिह्वा न दूषित कीजिये ।
अपनी प्रशंसा कान से सुन ध्यान ही मत दीजिये ॥
परमार्थ या व्यवहार में जो पुस्तकें नहिं काम की ।
उन का पठन करिये नहीं, यद्यपि मिलें विनु दाम की ॥

आलस्य वश कर्तव्य से मुख को कभी मत मोड़िये ।
जो कार्य होवे आज का कल पर उसे मत छोड़िये ॥
अवगुण सभी तज दीजिये शुभ गुण सदा ही धारिये ।
नहिं अन्य को उद्वेग हो ऐसे वचन उच्चारिये ॥

छोटी बड़ी अच्छी बुरी जो बात रखनी गुप्त हो ।
मुख पर उसे मत लाइये कितना हि चाहे कष्ट हो ॥
ओंडी उदर में राखिये नहिं थाह कोई ला सके ।
हो शत्रु अथवा मित्र हो नहिं भेद रंचक पासके ॥

मोहक पदारथ देख कर मोहित नहीं हो जाइये ।
धरि धैर्य चित को रोकिये मत क्षोभ मन में लाइये ॥
करिये न ऐसा चिन्तवन सुख शान्ति जिस से भंग हो ।

कीजे दिवस निशि यत्न यह, मन शुद्ध सूक्ष्म असंग हो ॥

ऐश्वर्य हो जो प्राप्त तो मत हर्ष किंचित् कीजिये ।
प्रारब्ध वश दुख प्राप्त हो तो भोग सुख से लीजिये ॥
नित चित्त अपना शांत रखिये कीजिये शुभ आचरण ।
निन्दा तथा स्तुति वेग को बढ़ने न दीजिये एक क्षण ॥

राजा, धनी, कवी, पंडितों, देवादि से सन्मान हो ।
हो दुर्जनों से दुःख, पीड़ा, या अधिक अपमान हो ॥
दोनों समझ कर एक से मन मत विकारी कीजिये ।
निज भाग्य वश शुभ या अशुभ जो होय होने दीजिये ॥

चंदर वदनी, पिक वयनि, गुण संपन्न, तरुणी सुन्दरी ।
सुन्दर वसन आभूषणों से युक्त शोभा मन्दिरी ॥
शूकर मृतक तनु श्वपच घर त्योंही अपावन मानिये ।
दर्शन न उसका कीजिये द्वारा नरक का जानिये ॥

अच्छे वसन आभूषणों में प्रेम को मत जोड़िये ।
चांदी, कनक, रत्नादि से सम्बन्ध अपना तोड़िये ॥
तृण, मृत्तिका, पाषण सम कौशल्या उन को जानिये ।
इतना हि उन का मूल्य है, इस से अधिक मत मानिये ॥

मल्लाह की टेर ।

मल्ला कहता टेर कर, नौका खड़ी तैयार है ।
जल्दी करो! आओ चढ़ो! चढ़ते हि बेड़ा पार है ॥
अन्तिम घड़ी, संझा पड़ी, बेड़ा न फिर से आयगा ।
जो रह गया सो रह गया, नहिं पार जाने पायगा ॥

मल्लाह कहता टेर कर, चेतो मुसाफिर मानवी ।
जग यन्त्र है पर तन्त्र दुख की योनि दैवी दानवी ॥
जो नाव पर चढ़ जायगा सो नर सुखी हो जायगा ।
जो रह गया सो रह गया, नहिं पार जाने पायगा ॥

मल्लाह कहता टेर कर, जग आश दुख का ढेर है ।
जन्मादि भोगे कष्ट जो सुनता न मेरी टेर है ॥
जो मुग्ध है संसार पर जन्मे मरे पछतायगा ।
जो रह गया सो रह गया, नहिं पार जाने पायगा ॥

मल्लाह कहता टेर कर, बहु घंट शंख बजाय के ।
मिथ्याजगत् है ब्रह्म सत् श्रुति शास्त्र कहते गायके ॥
उपदेश नौका पर चढ़े सो ब्रह्म में मिल जायगा ।
जो रह गया सो रह गया, नहिं पार जाने पायगा ॥

मल्लाह कहता टेर कर, संसार सर्व असार है।
सुख रूप आतम तत्त्व सो सब सार का भी सार है॥
सद्गुरु चतुर मल्लाह है वहि सार तत्त्व लखायगा।
जो रह गया सो रह गया, नहिं पार जाने पायगा॥

मल्लाह कहता टेर कर मेरी नाव पक्की एक है।
हैं वेद चारों बल्लियां पतवार पूर्ण विवेक है॥
दो पद उठा कर द्वन्द्व के बैठे वही तर जयगा।
जो रह गया सो रह गया, नहिं पार जाने पायगा॥

मल्लाह कहता टेर जग की आश सब तजदीजिये।
तन धन तथा सुत दार से मुख मोड़ अपना लीजिये॥
देहादि की ममता जिसे फिर २ जगत में आयगा।
जो रह गया सो रह गया, नहिं पार जाने पायगा॥

मल्लाह की सुन टेर संसारी नहीं है चेतता।
चढ़ता नहीं है आजपामर बाट कल की देखता॥
करता रहेगा आज कल, यह आ अचानक खायगा।
जो रह गया सो रह गया, नहीं पार जाने पायगा॥

मल्लाह की यह टेर सुन घबरा मुमुक्षू जाय है।
संसार से पल्ला छुड़ा कर डिगमिगाता धाय है॥

मन से करे है सोच बेड़ा हाथ में कब आयगा
जो रह गया सो रह गया, नहिं पार जाने पायगा ॥

मल्लाह की यह टेर सुन, सच्चा मुमुक्षू छोड़ सब।
पहुंचा तुरत ही नाव पर मल्लाह ने कोशल्या तब ॥
लीन्हा चढ़ा गहि हाथ को ले पार पहुंचा नाव को।
जो जीव था सो शिव हुवा, पाया अनामय तत्त्व को ॥

शब्द २१०

सांवरिया गिरधारी मयि को चाकर राखो जी ॥टेक॥
नौकर रहसां चाकर रहसां नित उठ दर्शन पावां ।
वृन्दावन की कुंजगली में गोविन्द लीला गावां ॥१॥
नौकरी में दरशन पांवा सुमरन पांवा खरचा ।
भाव भगत चंगेरी पांवा तीन बात शमशेरी ॥२॥
ऊंचे २ महल चिनावां बीच रखवां वारी।
सांवरिया के दरशन पावां लकुट कमरिया कारी।
जोग करन को जोगी आये तप करने सन्यासी।
नाम जपन को साधू आये वृन्दावन के वासी ॥
मीरां के प्रभु गिरधर नागर ऐसो गहर गंभीर।
ग्वालिनी को दरशन दीजो तट जमना के तीर ॥

सवैया

परम पवित्र तुम मित्र हो हमारे ऊधो,
अन्तर बिथा की कथा मेरी सुन लीजिये।
ब्रजकी वे बाला जपैं मेरी जयमाला,
बढ़ी बिरह की ज्वाला तामें तन मन छीजिये॥
मेरो विश्वास मेरी आस, रस रास मेरी,
मिलवे की प्यास जान सावधान कीजिये।
प्रीति सूं प्रतीति सूं लिखी है रस रीति सूं,
सो पत्रिका हमारी प्राण प्यारिन कूं दीजिये॥१

कवित्त

दास तो तिहारे जो उदास तो तिहारे,
दूर पास तो तिहारे आम ख़ास तो तिहारे हैं।
दीन तो तिहारे मतिहीन तो तिहारे,
जो नवीन तो तिहारे प्राचीन तो तिहारे हैं॥
क्रूर तो तिहारे गुण पूर तो तिहारे,
राचें नूर तो तिहारे साँचे शूर तो तिहारे हैं॥
भायक तिहारे यश गायक तिहारे,
हो सहायक हमारे हम पायक तिहारे हैं॥१॥

सवैया

निशि वासर प्रेम के पन्थ चले,
हिये ते हरि नाम बिसारे नहीं।
घटि वृद्धिय देखि के एक घरी,
धरका जिय में कछु धारे नहीं ॥
बिधि को विश्वास "ओंकार" कहैं,
अपनो बल बुद्धि बिसारे नहीं।
वही मानस की वड़ी किम्मत है,
जो समय पर हिम्मत हारे नहीं ॥१॥

कवित्त

सामिल है पीर में शरीर में न राखें भेद,
अन्तर कपट कछु होय तो उघरि जात।
ऐसो ठाट ठाने जाते बिना जन्त्र मन्त्रन तें,
सांपहु को ज़हर उतारे तो उतर जात ॥
ठाकुर कहत यामें कठिन न मानो कछु,
हिम्मत किये ते कौन काज ना सुधर जात।
चारि जने चारिहि दिशा ते चारि कोने गहि,
मेरु को हिलायें औ उखरें तो उखार जात॥१॥

छप्पय

कबहुंक खग मृग मीन, कबहुं मर्कट तनु धर के ।
कबहुंक सुर नर असुर, नागमय आकृति करके ॥
नटवत लख चौरासी, स्वांग धरि २ मैं आयो ।
हे त्रिभुवन के नाथ, रीझ के कछू न पायो ॥
जो हो प्रसन्न तो देहु अब, मुक्ति दान मांगूं बिहंस ।
जो पै उदास तो कहहु इम, मत धर रे नर स्वांग अस ॥

कवित्त

एक स्वांस खाली मत खोयलो खलक बीच,
कीचरु कलङ्क अङ्ग धोयले तो धोयले ।
उर अंधियार पाप पुर सों भरयो है तामें,
ज्ञान की चिराग चित्त जोयले तो जोयले ॥
मिनषा जन्म बार २ न मिलैगो मूढ़,
पूर्ण प्रभु से प्यारो होयले तो होयले ।
देह क्षण भंगुर यामे जन्म सुधारबो सो,
बीजके झमके मोती पोयले तो पोयले ॥१॥

दाता हु महीप मानधाता हु दिलीप जैसे,
जाके यश अज हूं लौं द्वीप २ छाये हैं ।

बली ऐसो बलवान को भयो जहान बिच,
रावण समान को प्रतापी जग जाये हैं ॥
बाण की कलान में सुजान द्रोण पारथ से,
जाके गुण दीनदयाल भारत में गाये हैं।
कैसे २ शूर रचे चातुर बिरञ्चजू ने,
कर चकचूर कर धूर में मिलाये हैं ॥२॥

कोऊ तो कहत ब्रह्म नाभि के कमल मध्य,
कोऊ तो कहत ब्रह्म हृदय में प्रकाश है ।
कोऊ तो कहत कण्ठ नासिका के अग्र भाग,
कोऊ तो कहत ब्रह्म भृकुटी में वास है ॥
कोऊ तो कहत ब्रह्म दशवें द्वार बिच,
कोऊ तो कहत भंवर गुफा में निवास है ।
पिण्ड में ब्रह्मांड में निरन्तर विराजे ब्रह्म,
सुन्दर अखण्ड जैसे व्यापक आकाश है ॥२॥

सवैया

काम ही न क्रोध जाके लोभ ही न मोह जाके,
मद ही न मत्सर न कोऊ न विकारी है ।
दुःख ही न सुख माने पाप ही न पुण्य जाने,

हर्ष न शोक आनै देत ही तें न्यारो है ॥
निन्दा न प्रशंसा करै राग ही न द्वेष धरै,
लेन ही न देन जाके, कछु न पसारो है।
सुन्दर कहत ताकी अगम अगाध ताकी,
ऐसा कोऊ साधु सो तो रामजी कूं प्यारो है ॥१

सवैया

प्रथम सुयश लेत शीलहू सन्तोष लेत,
क्षमा दया धर्म लेत पाप से ढरतु है।
इन्द्रिय कूं घेरि लेत मन ही कूं फेरि लेत,
योगकि युगति लेत ध्यान ही धरतु है ॥
गुरु को बचन लेत हरिजी को नाम लेत,
आतमा को शोध लेत भवजल तरतु है।
सुन्दर कहत जग सन्त कछु देत नहिं,
सन्त जन निशि दिन लेबो ही तरतु है ॥ २ ॥

सवैया

सांचो उपदेश देत भलि २ सीख देत,
समता सुबुद्धि देत कुमति हरतु है।

मारग दिखात देत भावहुं भगति देत,
प्रेम की प्रतीत देत अमरा भरतु है ॥
ज्ञान देत ध्यान देत आत्म बिचार देत,
ब्रह्म कूं बताय देत ब्रह्म में चरतु है,
सुन्दर कहत जग सन्त कछु लेत नहीं,
सन्त जन निश दिन देबो ही करतु है ॥ ३ ॥

सवैया

मेरी देह मेरी गेह मेरो परिवार सब,
मेरो धन माल मैं तो बहुविधि भारो हूं ।
मेरे सब सेवक हुकम कोऊ मेटे नाहीं,
मेरी युवती को मैं तो अधिक पियारो हूं ॥
मेरो वंश ऊंचो मेरे बाप दादा ऐसे भए,
करत बड़ाई मैं तो जगत उजारो हूं ।
सुन्दर कहत मेरो मे ो ही जाने शठ,
ऐसे नहिं जाने मैं तो काल ही को चारो हूं ॥४

कवित्त

ब्रह्म तो वही है जौन सच्चिदानन्द घन,
निर्विकार निर्विकल्प नित ही प्रकाशै है ।

माया तो वही है जौन रज यम सत,
गुणधार नाना नाम रूप जनकै विनाशै है ॥
ईश्वर तो वही है निज रूप को न भूले कभी,
माया गहे माया सो प्रथक् उलासै है ।
जीव तो वही है जो अविद्या को संयोग पाय,
भूले निज रूप भ्रम फांस ना निकासै है ॥ १ ॥

कवित्त

जाको शुद्ध हियो ताको अनुभव तुम्हारो होत,
नाथ निज तेज ही से मायागुण नासी है ,
जगत के व्यापी निज जापी को प्रतापी करो,
नाम रूप आप के अनन्त दिव्य भासी है ॥
आप के समान नहीं अधिक कहांते होय,
अहङ्कार क्षार होत ध्याये मुदराशी है ।
काला त्रास नासी तत्काल कर निहाल देत,
राजे रघुराज जैसे अवध बिलासी है ॥ २ ॥

कवित्त

आदि है न अन्त है अगमरू अज महापावन,
प्रसङ्ग औ अलख प्रमाण अप्रमाण है ।

एक है प्रकाश है पूरण महाकाश विभु,
निर्गुण निरञ्जन है चिदानन्द ज्ञान है ॥
नित्य है अमर अविनाशी औ अजर सदा,
अव्यक्त निर्विकल्पअरु अवाच्य निर्वान है ।
विश्व को कर्तार शब्द ओंकार है वेदरूप
पुराण पुरुष विभु एक भगवान है ॥३॥

कवित्त

मोर मुकुट वारो भरै भेष नट वारो,
छोटी लोल लट वारो जगत उजारो है ।
सांवरे बर्ण वारो मुरली धरन वारो,
संकटहरन वारो नन्दजू को प्यरो हैं ।
दानव दलन वारो छवि को छलन वारो,
मटक चलन वारो पोष उर धारो है ।
कंस को दलन बारो भृगुलता लत्तवारो,
मोरपङ्ख बारो रखवारो सो हमारो है ॥४॥

छप्पय

तृण जो दन्त पर धरहिं, तिनहिं मारत न सबल कोई ।
हम नितप्रति तृण चरहिं, बैन ऊच्चरहिं दीन होई ॥

हिंदुहि मधुर न देहिं कटुक तुरकन न पिलावहिं ।
पय विशुद्ध अति स्रवहिं, वच्छ महिथम्वन जावहिं ॥
सुन शाह अक्कबर अरज़ यह, करत गौ जोरे करन ।
सो कोन चूक मोहि मारियत, मुये चम सेवहूं चरन ॥१
गोविन्द के कीये जीव जातहैं रसातल को,
गुरु उपदेश सो तो छूटे जम फन्द ते ।

कवित्त

गोविन्द के किये जीव वश परे कर्मन के,
गुरु के निवाज सूं ते फिरते स्वच्छन्द ते ॥
गोबिन्द के किये जीव डूबत भवसागर मैं,
सुन्दर कहत गुरु काढ़े दुख द्वन्द्वते ।
और हूं कहां लोक जू मुख से बनाय कहूं,
गुरु की तो महिमा अधिक गोविन्द ते ॥१
राम है मात पिता सुत बन्धु, वही सङ्गी सखा गुरु राम सनेही
रामको मोय भरोसो है रामको, रङ्क रुच राखो न केही ॥
जीवत राम है मुये पुन राम, राम सदा रघुनाथकी गतिजेही
सोई जिये जग में तुलसी, न तो डोलत और मुये धरदेही ॥

कुण्डली

पृथ्वी पवन आकाश है, नीर अग्नि शशि भान।
कपोत गुरु अजगर लख्यो, और सिन्ध को जान॥
और सिन्धु को जान, पतङ्गी भंवरा कहिये।
माखी हाथी मृग मीन, अरु पिङ्गला लहिये॥
चिन्ह बाल कन्या कहूं, तीर बनावनहार।
सांप माकणी भृङ्ग ज्यों, चौवीसों उरधार॥ १॥

कवित्त

मैं तो हूं पतित आप पावन पतित नाथ,
पावन पतित हो तो पातक हरोहीगे।
मैं तो महादीन आप दीनबन्धु दीनानाथ,
दीनबन्धु हो तो दया जिये में धरोहिगे॥
मैं तो हूं गरीब आप तारक गरीबन के,
तारक गरीब हो तो बिरद बरोहिगे।
मोरी करणी पै कछु मुकुर न कीजे कान्ह,
करुणानिधान हो तो करुणा करोहिगे॥ १।

कवित्त

कैसे तुम गणिका के अवगुण ना गिने नाथ,

कैसे तुम भीलनी के जूठे बेर खाये हो ।
कैसे तुम द्वारिका में द्रोपदी की टेर सुनी,
जैसे तुम गज के काज नङ्गे पग धाये हो ॥
कैसे तुम सुदामा के छिन में दरिद्र हरे,
कैसे तुम उग्रसैन बन्दी ते छुड़ाये हो ।
मेरी बेर एती देर कान मूंद रहे नाथ,
दीनबबन्धु दीनानाथ काहे को कहाये हो ॥ २ ॥

कवित्त

गिरि को उठाय ब्रज गोप को बचाय लियो,
अनल ते उबारो पुन बालक मंजारी को ।
गज की अरज सुन ग्राह ते छुड़ाय लीनो,
राख्यो ब्रत नेम धर्म पाण्डव की नारी को ॥
राख्यो गज घन्ट तले बालक विहङ्गम को,
राख्यो प्रण भारत में भीष्म ब्रह्मचारी को ।
त्रिधा दुःखहारी निज सन्तन सुखकारी,
एक मोहि तो भरोसो भारी ऐसे गिरधारी को ॥ ३

कवित्त

स्वांस के भरोसे गढ़ मांस में निवास कियो,

आशा मन माहीं राखी मानन शरीरां की ।
बड़े २ शूरवीर देख छोड़ गये मूरख,
रही ना निशानी जग शाहां ओ वजीरां की ॥
भज दुखभञ्जन निरञ्जन को रे मूढ़,
नित्य रोज सुध ले जो पाहन में कीरां की ।
कहें कवि धारामल सुमरण की यही पल,
एक २ घड़ी जात लाख २ हीरां की ॥ ४ ॥

कवित्त

दीनता को त्याग नर अपना स्वरूप देख,
तू तो शुद्ध ब्रह्म अज हृदय को प्रकाशी है ।
अपने अज्ञान तैं जगत सब तू ही रचे,
सर्व को संहार करे आप अविनाशी है॥
मिथ्या परपञ्च देख दुःख जिन आन जीये,
देवन को देव तू तो सब सुखराशी है ।
जीव जगईश होय माया से प्रभावे तूही,
जैसे रज्जू सांप सीप रूप ह्वै प्रभासी है ॥ ५ ॥

कवित्त

श्याम तन श्याम मन श्याम ही हमारो धन,

आठों याम ऊधो यहां श्याम ही सों काम है ।
श्याम हिये श्याम जीये श्याम बिन नाहिं तीये,
आंधरे की लकड़ी अधार नाम श्याम है ॥
श्याम गति श्याम रति श्याम ही प्रताप पति,
श्याम सुखदाई से भुलाये घर धाम है ।
तुम भये बौरे ऊधो पाति लाये दौरे दौरे,
योग कहां राखें हम रोम रोम श्याम है ॥ ६ ॥

कवित्त

पुरुष रतन गुण गण को सदन पुन,
पौरुष को आय तन परम प्रवीणा है ।
सारी धरा को शृङ्गार जड़ाजड़ा को सरदार,
भोग मोक्ष को भण्डार अरु चारु लखि लीना है ॥
चतुर वदन को चतुर हम चीनो तब,
प्रथम जो ऐसे नर को उतपन कीना है ।
ताके पीछे तत्क्षण नष्ट करे हा हा,
कष्ट इति विधि विधिनाको पण्डित न चीना है ॥ ७

कवित्त

दीप में पतङ्ग परे जरे न प्रताप जाने,

मीन से अज्ञान भये कुण्डी मिलै मांस को।
मज गजी हेत परयो खात २ अंकुश को,
राग में कुरङ्ग राग करे निज नाश को॥
पङ्कज की गन्ध बीच नीच भृङ्ग मीच गहे,
आदि अङ्ग नाश करे निज स्वांस को।
अहो हा सघन महा मोह को प्रताप लाहा,
शुभाशुभ जानो पै न हनो भोग आशा को॥८॥

कवित्त

सोम नाह विप्रवर गिरिजा को वर कर,
लीनो सुधा फल कर दीनों नरमाह के।
भूपति सुपतनी को रानी निज मीत की को,
ताने दीनों गीत की को नीको फल चाह के॥
आगे गणिका सरागे धरापति आगे,
धरा नरनाथ माथ धुनी सुन ताहि के।
हाहा कामिनी के हित हते कामिनी के,
अब ताहे तजो ताहे भजो शीश शशी जाय के॥९

कवित्त

अ धन के ज्ञाते माते मत्सर कीच बीच,

धरा नाथ मद साथ भरे दरशात हैं।
दूषण चमोरे मोरे भूषण सुभाषण की,
पण्डित भूपाल तो न सुने मेरी बात हैं॥
पुनि आन जन्तु जेते दुखी मूढ़दीन तेते,
मोते सकुचात हम ओतो सकुचात हैं।
पात्र बिना भाषे राखे हवन को राखे तैसे,
जीरण मो गात सोतो बात होत जात है॥१०॥

सवैया

तात का शोच न मात का शोच
न शोच भयो मोय अवध तजे को।
बनवास लिये को शोच नहीं,
और शोच नहीं मोहि पि..ा मरे को॥
सिया हरे को शोच नहीं,
और सोच नहीं मोय गृद्ध मरे को।
बालि हते को शोच नहीं,
और शोच नहीं मोय लंक जरे को॥
लक्ष्मण मूर्छित शोच नहीं,
और शोच नहीं मोय विपत्त परे को।
शोच तो है इक है तुलसी मोहि,

विभीषण पैज दिये को ॥१॥

सवैया

बातहिं से दशरथ मरे,
अरु बातहिं राम फिरे बन जाई।
बातहिं से हरिचन्द सहे दुख,
बातहिं राज्य दियो मुनिराई॥
रे मन बात विचार सदा कहु,
बात की गात में राख सचाई ।
बात ठिकाने नहीं जिन की,
तिन बाप ठिकाने न जानहुं भाई ॥२॥

सवैया

पूरण ब्रह्म लखा जिन केवल,
एक अखण्ड रमा भवसारे ।
रूप न रेख अलेख सदा यम,
भाषत हैं जिन को श्रुति चारे ॥
ज्ञान दिनेश चढ़ा जिन के,
मत मोह निशा के मिटे सब तारे ।
सो गुरु हैं हमरे उर में,
जिन पाप महानिधि पार उतारे ॥३॥

सवैया

एक अखण्डित ब्रह्म असंग,
अजन्म अदृश्य अरूप अना में ।
मूल अज्ञान न सूक्ष्म स्थूल,
समष्टि न व्यष्टिपन्थ नहीं तामें ॥
ईश न सूत्र विराट न प्राज्ञ,
तैजस विश्व स्वरूप न जामें ।
बन्धन न मोक्षन भोग न योग,
नहीं कुछ वामेरु है सब वामें ॥४॥

सवैया

जाग्रत में जो प्रपञ्च प्रभासत,
सो सब बुद्धि बिलास बन्यो है ।
ज्यों सुपने मेंहि भोग्य न भोग,
तऊ एक चित्र विचित्र जन्यो है ॥
लीन सुषुप्ति में मति होतई,
भेद भगे एक रूप सुन्यो है ।
बुद्धि रच्यो जो मनोरथ मात्र,
सुनिश्चित बुद्धि प्रकाश बन्यो है ॥५॥

सवैया

ब्रह्म ही निरीह निरामय निर्गुण,
एक निरंजन और न भाषे ।
ब्रह्म अखण्डित है अघ ऊपर,
बाहर भीतर ब्रह्म प्रकाशे ॥
ब्रह्म ही सूक्ष्म स्थूल जहां लग,
ब्रह्म ही साहिब ब्रह्म ही दासे ।
सुन्दर और कछु मत जानहुं,
ब्रह्म ही देखत ब्रह्मतमासे ॥६॥

सवैया

ये सब भाव मिटे तबहीं,
जब कोविद की नर संगति पावे ।
भाष्य शारीरक आदि पढ़े,
कठ केन कथा मति संग मिलावे ॥
संयम योग समाधि करे,
यम नेम निरन्तर लक्ष्य बनावे ।
ब्रह्मही ब्रह्मचहुं दिश देखत,
या विधिते पद निर्भय पावे ॥७॥

सवैया

जो फल थे तन मानवके,
वह लाभ किये हमने अब सारे।
आनन्द ब्रह्म सुधानिधि को लख,
दूर भये भव मे भय भारे॥
क्षुद्र नदी सम मेट दियो,
वपु ब्रह्म पयोनिधि माहिं पधारे।
प्रत्यक्ष रूप भई ममता यह,
पुत्रवधू अब नाहीं हमारे॥८॥

सवैया

सुत के हित प्यार करे जग में,
कहो कौन करे धन के हित प्यारा।
हित नार न प्यार करे जग में,
इभी ढूंढ़ लिया हमने भव सारा॥
हित आतम प्यार करें सब ही,
यह आतम है सब से अति प्यारा।
वह आनन्द रूप पयोनिधि है,

उसके बिन और नहीं कोऊ प्यारा ॥९॥

सवैया

वसु पूरण हो वसुधा सगरी,
  पुन और पदारथ हों सुखकारी।
गज गामिनी भामिनी हो मधुरा,
  मुख की छबि चन्द्रकला जिन टारी ॥
शुभ व्यञ्जन होहिं अहारघने,
  जिनके रसते तनु पुष्टि अपारी।
सुख आतम नाहिं लहैं जबहीं,
  तब होहिं हलाहल के समचारी ॥१०॥

सवैया

वह आनँद नाहिं मिले धन से,
  और नाहिं मिले वह त्याग कमाये।
तन तीरथ त्याग करे न मिले,
  न मिले हरि के पुर देह तपाये ॥
वन कानन घोर निवास करे,
  अथवा गिरिकन्दर माहिं बसाये।
रति आतम एक सुधा धनहै,

पर जो रति जाइ सुनाइ सताये ॥११॥

सवैया

जिन को नित मैं चितवों चितमें,
तिन कीरति मो तन माहिं रतीना ।
वह आन पुमान की संग रति,
पुनि ता मन में गणिका सुह कीना ॥
धिक् है अबला धृत कन्दर्प,
अरु मोहि धिकार जो धार अधीना ।
इति रीत्त समूह की प्रीति तजी,
नृप होय योगीश्वर ईश्वर चीना ॥१२॥

सवैया

ये श्रुति ज्ञान सुजानन के,
अभिमान मदादि विकार जिधारे ।
केचित् मो सम नीचन के,
चितमें बहुमान मदादिक धारे ॥
शून्य यथा मठ साधुन को अति,
मोक्ष को साधन दोय महार ।

सो हम से मदनातुर को अति,
काम को कारण बाम सम्हारे ॥१३॥

छप्पय

जय जय मीन बराह कमठ नर हरि बलि वामन ।
परशुराम रघुबीर कृष्ण किरति जग पावन ॥
बुद्ध कलंकी व्यास पृथू हरि हंस मन्वंतर ।
यज्ञ ऋषभ हयग्रीव ध्रुव वरदेन धन्वंतर ॥
बदरीपति दत्त कपिलदेव, सनकादिक करुणा करो ।
चौवीस रूप लीला रुचिर, अग्रराम उर पद धरो ॥१॥

छप्पय

विधि नारद शंकर सनकादिक कपिल देव मनु भूप ।
नर हरिदास जनक भीष्मरु बलि शुक मुनि धर्मस्वरूप ॥
अंतरंग अनुचर हरिजू के जो इनको यश गावे ।
आदि अंतलों मंगल तिनके श्रोता वक्ता पावे ॥
अजामील प्रसंग यह निर्णय परमधर्म को जान ,
इनकी कृपा और पुनि समझे द्वादश भक्त प्रधान ॥ २

कवित्त

न्हाता हि बिदुर नारि अंगनि प्रक्षाल करि,
आये गए द्वार कृष्ण बोलि कै सुनायो है।
मत हि सुर सुधि डारलै निडर मानो,
राख्यो मद भरि दौरि आनिकै चितायो है ॥
डारि दियो पीतपट कटि लिपटाय लियो,
छियो सकुचायो वेष वेग ही बनायो है।
बैठी ढिंग आय केरा छीलि छिलकाखवाइ,
आयो पति खीज्यो दुःख कोटि गुनो पायो है॥१॥

प्रेम को विचारि आप लागे फलसार देन,
चैन पायो हिये नारी बडी दुःख दाई है।
बोले रिझि श्याम तुम कीन बड़ो काम,
तो पै स्वाद अभिराम कैसी वक्स मैं न पाई है ॥
तिय सकुचाई कर काटि डारौं हाथ,
प्राणप्यारे को खवाय छीलि छीलका निभाई है॥
हित ही की बात दोऊ कोऊ पार पावैनाहिं,
नीके ले लड़ावै सोई जाने यह गाई है ॥२॥

कवित्त

बन में रहत नितसिवरी कहत,
सब चहत टहल साधु तन न्यूनताई है।
रजनी के शेष ऋषि आश्रम प्रवेश करी,
लकरीन बोझ धरी आवे मनभाई है॥
न्हाइबे को मग झारी फांकरिन बीन डारि,
बेगि उठ जाय नेकु जाति न लखाई है।
उठत सवार कहें कोन धौं बुहारि गयो,
भयो हिये शोच कोऊ बड़ो सुखदाई है॥१॥

बड़े ही असंग वे मतङ्ग रसरंग भरे,
धरे देख बोझ कह्यो कौन चोर आयो है।
करे नित चोरी अहो गहो बाहि एक दिन,
बिना पाये प्रीति बाको मन भरायो है॥
बैठे निशि चौकी देत शिष्य सब सावधान,
आय गई गहि लई कांपै तन नायो है।
देखतहि ऋषि जल धारा चली नैनन ते,
बैनन सों कह्यो जात कहा कहुं पायो है॥२॥

रीठि : न सोही होत मानि तन गोत छोत,

परी जाय सोच सोत कैसे कै निकारिये।
भक्ति को प्रताप ऋषि जानत निपट नीके,
कोऊ कोटि विप्रताई यापै वारि डारिये॥
दियो बास आश्रम में श्रवण में नाम दियो,
कियो मुनि रोष सेवा कीनी पाति न्यारिये।
शिबरी सों कह्यो तुम राम दरशन करो,
मैं तो परलोक जात आज्ञा प्रभु पारिये॥३॥

गुरु के वियोग हिये दारुण लै शोग दिये,
जियो नाहिं जात तोपै राम आश लागी है।
न्हायवे के घाट निशि जात ही बुहारि सब,
भई यों अपार ऋषि देखि व्यथा पागी है॥
छयो गयो नेकु बहुखीझत अनेक भांति,
करिकै विवेक गयो न्हान यह भागी है।
जल सों रुधिर भयो नाना कृमि भरि गयो,
नयो पायो शोच तऊ जाने न अभागी है॥४॥

न्यारे बन बेर लागी राम की औसेर फल,
चाखे धरि राखे फेरि मीठे उन्हीं योग हैं।
मारग में रहे जाइ लोचन बिछाय कबू,
अबें रघुराई दृग पावें निज भोग हैं॥

ऐसे ही बहुत दिन बीते मग जोवतहिं,
आय गये औचकहि मिटे सब शोभ हैं ॥
जोपै तन न्यूनताई आई सुधि छिपि जाई,
पूछैं आप स्योरि कहां टाड़े और लोग हैं ॥ ५

पूछि २ आये तहां शिवरी स्थान जाहां,
कहां वह भगवती देखों दृग प्यासे हैं।
आय गई अश्रम में जानि कै पधारे आप,
दूरिहित साष्टांग करी चक्षु भासे हैं ॥
हबकि उठाय लई व्यथा तन दूरि गई,
नई नीर झरी नैन परे प्रेम प्यासे हैं।
बैठे सुख पाय फल खाय के सराय वेई,
कह्यो कहा कहों मेरे मग दुःख नासे हैं ॥ ६ ॥

करत हैं शोच सब बैठे आप अश्राम में,
जलको बिगार सो सुधार कैसे कीजिये।
आवत सुने हैं वन पथ रघुनाथ कहूं,
आवें जब याको भेद भले कह दीजिये ॥
इतने ही भांक सुनि स्यौरी के विराज आनि,
गयो अभिमान चलो पग गहि लीजिये।
आय खुनसाय कहि नीर को उपाय कहो,

गहो पग भीलनि के स्वच्छ तन भीजिये॥ ७॥

रतन अपार सार सागर उधार किये,
लिये इत चायके बनाय माला करी है।
सब सुख साज रघुनाथ महाराज जू को,
भक्त सों बिभीषणजू आनि भेटधरी है॥
सभा ही की चाह अवगाह हनुमान गरे,
डारि दई सुधि भई मति अरबरी है।
राम बिन काम कौन फोरि मनी दीने डारि,
खोलि त्वचा नामहिं दिखायो बुद्धि हरी है॥८॥

शब्द २११

मैं चौंक पड़ी महलों में सुन मन मोहन की बंसुरी ॥टेक॥
ऐसी बंसुरी कान बजाई घर तज दिया ऐर सब भाई।
मैं ओढे खड़ी थी रजाई चट देसी पलंग पै पसरी ॥१॥
गारी ऐसी अद्भुत लीला सब बाजा बजै रसीला।
मेरा मन जादू ने कीला मेरी बिन्धी पड़ी नस नसरी ॥२॥
क्या छवि बरनूं मैं वाकी सब अदा निराली बांकी।
करी मोर मुकुट की झांकी जिस में मनी रही थी पसरी ॥३
श्रीनन्द का कृष्ण कन्हैया ब्रज बासी धेनु चरैया।

कहे नेतराम दुर्गा मय्या कुछ करो मेरे पै जसरी ॥४॥

शब्द २१२

सोवै है नगरिया सारी जागूंरी भनेली मैं ॥टेक॥
चेतन चिराग प्यारी चांदना हवेली में ।
वगड़ में अंधेरी छाई डरूं हुं अकेली में ॥१॥
खिड़की सारी वन्द करके सोचती अकेली में ।
पिया २ रटने लागी नार थी नुहेली में ॥२॥
इतने में एक सोऽहं २ शब्द हुआ हेली में ।
श्यामसुन्दर मन्दिर के अन्दर टेरें खड़े देली में ॥३॥
शून्य अटा पर सेज सजन की वहां पकड़ ले लई में ।
वीरम कहे परम सुख पाई पीछे चौसर खेली में ॥४॥

शब्द २१३

कान्हा वंशी वारे मोरी गली आजारे ॥टेक॥
कोरी कोरी मटकन दही जमायो, मेरो ही माखन खाजारे ॥
वृन्दावन की कुञ्ज गलिन में, झुक मुखड़ा दिखाजारे ॥
मैं तिहारे पर हुई हूं बावरी, तन की तपन बुझाजारे ॥
चरणदास कहे सुखदेव पियारे, नेनों से नैन मिलाजारे ॥

शब्द २१४

वंशी वारे उठाना मेरी मटकी ॥टेक॥
संग की सहेली जल भर सटकी वँसी की धुन सुन मैं ही रही अटकी ॥१॥
दौरानी जिठानी से रहे खटकी, देंगी सब ताना एती वार कहां अटकी ॥२॥
मटकी उठाऊं नहीं जानूं तेरे घटकी, संग ले जाय शोभा सारे पनघट की ॥३॥
शंभु सखी की नाव परी अटकी, जो जानत हो घटकी तो लाज राखो घूंघट की ॥४॥

शब्द २१५

बताद कान्हा मोय कैसे आयो मेरी बास्वर में ।
मैं तो अपने चौबारे में, रही पलङ्ग पर सोय ।
बांह पकड़ तैंने आन जगाई, तेरी अकल गई कहां खोय ॥२
भज जा कन्हा घर अपने को मैं समझाऊं तोय ।
जो मेरा बलमा जाग पड़ेगा, खूब लड़ाई होय ॥२॥
बड़े घरन की राजदुलारी, क्या समझेहै मोय ।
तेरी जात अहीरा कान्हा, जानत हैं सब कोय ॥३॥

यह बातें मथुरा में कान्हा, देऊं कंस से पोय ।
भरी कचेहरी पकड़ मंगावे, तेरी माय मरेंगी रोय॥४॥

शब्द २१६

बांस चढ़ी हरपानी नटनियां ॥टेक॥
शब्द बास धुनि डोर पकड़कर,
गगन में चढ़ मगनानीन टनियां॥१॥
बाजे अनहद ऊपर बाजें,
चढ़ गई अधर ठिकाने नटनियां ॥२॥
सत्यलोक में जाय डङ्का दीना,
गुरु को करत सलामी नटनियां॥३॥
पदमदास फिर उलटी चढ़,
चरण गुरु के लपटानी नटनियां ॥४॥

शब्द २१७

बन आवे की बातरे ऊधो, बन आवे की बातरे ।
एक समय हर हमने देखे, मुख धोवत ना हाथ रे ।
अब सो कृष्ण भये ब्रह्मचारी, सौ सौ बिरियां न्हात रे ॥१॥
एक समय हर हमने देखे, छीन छीन दधि खात रे ।

अब तो कृष्ण भये हैं राजा, चढ़े सिंहासन जात रे ॥२॥
कर पै पात पात कर ही पै, मांग २ दधि खात रे।
जो माधो इस बन नहिं आते, तुम क्यों आवत जात रे ॥३
यही बात उन से जा कहियो, और बातों की बात रे ।
यह बात उन ही को सोहे जाके दो जननी दो तात रे ॥४
ज्यूं मदकुल बसे काष्ठ में, बंधा अम्बुज के पात रे।
जो गङ्गा देवन को दुर्लभ, जामें श्वान नहात रे ॥५॥
तेल के संग फुलेल होत है, महकत बास सुबास रे ।
मोती बीच सूत का तागा, महंगे मोल बिकात रे ॥६॥
वृन्दाबन में गऊ चरावत, गोकुल ही को जात रे ।
हाथ लकुटिया कांधे कमरिया, रज लिपटाये गात रे ॥७॥
यही वृन्दावन यही वन कुञ्जन, यही पलाश के पात रे ।
हाथ ओट हरि द्रुम से खाया, दधि माखन और भात रे ॥८
यो मन माधो जीसे झगड़ूं, दे कुब्जा के लात रे ।
सूर श्याम कुबजा संग विर में, गोपीयन संग लज्जात रे ॥

गोविंदाष्टक ।

सत्यं ज्ञान मनन्तंनित्य मनाकाशं परमाकाशं ।
गोष्ठ प्राङ्गण रिंगण लोल मनायासं परमायासं ॥

माया कल्पित नानाकार मनाकारं भुवनाकारम् ।
क्षमामा नाथ मनाथ प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥१॥
मृत्सा मत्सी ह्येति यशोदा, ताड़न शैशव संत्रासं ।
व्यादित् वक्रा लोकित लोका, लोक चतुर्दश लोकालिम् ॥
लोक त्रयपुर मूलस्तम्भं, लोका लोक मना लोकं ।
लोकेशं परमेशं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥२॥
त्रैविष्टपरिपु वीरघ्नं क्षति भारघ्नं भव रोगघ्नं ।
कैवल्यं नवनीता हार, मनाहारं भुवनाहारं॥
वैमल्य स्फुट चेतो वृत्ती, विशेषा भास मनाभासं।
शैवं केवल शान्तं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥३॥
गोपालं प्रभु लीला विग्रह, गोपालं कुल गोपालं ।
गोपी खेलन गोवर्द्धन धृत, लीला लालित गोपालम् ॥
गोभिर्निगदित गोविन्द, स्फुट नामानं वहु नामानं ।
गोधी गोचरं दूरं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥४॥
गोपी मन्डल गोष्ठी भेदं, भेदावस्थं भेदाभं ।
शश्वद्गोखुर निर्धूतोद्धत, धूली धूसर सौभाग्यं ॥
श्रद्धा भक्ति गृहीत्वा नन्दं, चिन्त्यं चिन्तित सद्भावं ॥
चिन्तामणि मणि मानं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम्॥५॥
स्नान व्याकुल योशिद्व वस्त्र, मुपादायाग मुपारूढं ।
व्यादित संतीरथ दिग् वस्त्रा, वस्त्र मुपाकर्षन्तंता ॥

निर्धूत द्वय शोक विमोहं, बुद्धंबुद्धे रन्तस्थं ।
सत्ता मात्र शरीरं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥६॥
कान्तँ कारण कारण मादि, मनादिं काल घना भासं ।
कालिन्दि गत कालिय शिरसी, नृत्यन्तं मुहुर्नृत्यन्तम् ॥
कालं काल कलातीतं, कलिता शेषं कलि दोषघ्नँ ।
कालत्रय गति हेतुं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥७॥
बृन्दावन भुवि बृन्दारकगण, बृन्दा राधित बन्धेहं ।
कुन्दा भामल मन्दस्मेर, सुधानन्द सुहृदानन्दम् ॥
बन्धा शेष महा मुनि मानस, बन्धानन्द पद द्वन्दं ।
बन्धा शेष गुणाब्धिं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥८॥
गोविन्दाष्टक मेतद्धीते, गोविन्दा र्पितसंचेता ।
गोविन्दांघ्रि सरोज ध्यान, सुधा जल धौत सगस्ताघः ॥
गोविन्दाच्युत माधव विष्णो गोकुल नायक कृष्णेति ।
निन्यं गायन यास्यति भक्तो गोविन्दं परमानन्म् ॥

शब्द २१८

कोई है सत्गुरु का लाल राम रंग रंच्या हो ॥टेक॥
आदि अहिंसा धर्म पहचाने सत्य दान हृदय में आने ।
तन मन चोरी प्रकट बखाने आप समान सर्व हित जाने ।
अचल नेम दृट बांच कांच का सांचा हो ॥१॥

त्यागो काम अष्टप्रकारा मार क्रोध मद कर दो छारा ।
बहे न लोभ मोह की धारा वित्तसमान रहे दातारा ।
निर्मुख देत न जाने आन जिन जांचा हो ॥२॥
स्वाद गंध रस रूप रंग के पाँचो बैरो मार संग के ।
जप तप जोधा जोड़ संग के डाटो डाट सकल जंग के ।
क्या जूझेगे कूर करनी का कांचा हो ॥३॥
सुन दुर्वचन दुःखी नहीं होवै कौन जाने जागै के सोवै ।
विपत दाग धीरज से धोवै कर्म काष्ट काहू नहीं रोवे ।
अपना लिखा ललाट आप हंस बांचा हो ॥४॥
स्वर्ग नरक इच्छा दोऊ त्यागी निर्भय रंग रंगावे रागी ।
शिम्भूदास शब्द लो लागी आशा तृष्णा त्यागी घर भागी
म्हारे गुरु ने मारा तान ज्ञान तमाचा हो ॥५॥

शब्द २१९

कुंजी ला देखो भाई थारी काया नगर गुलजार ॥टेक॥
शिव की पुरी ब्रह्म का वासा विष्णु वैकुण्ठ रचाई ।
मक्का मदीना पुरी द्वारका अजुध्या यहां ॥१॥
नौसे नदी नवासी झरने सात समुन्द्र याहिं ।
गंगाजमना है सरस्वती त्रिवेणी भी यहां ही ॥२॥
[illegible] सभी [illegible] के मांहीं ।

नौ दरवाजे प्रकट दीखैं दसवाँ गुप्त बनाई॥३॥
जैसे तार को परोये मकरिया उसी तार को चढ जाई ।
सुरत निरत कर ऐसे लागो तब दरवाजा पाई ॥४॥
गुरु अपने से ले कर ताली झटपरै खोल बगाई ।
खुली किवड़िया चढ़ा गगन में अनुभव नगरी पाई ॥५॥
ब्रह्मएत्त ऊपर किरपा हो गई गुरु मिले नाथ हंसाई ।
एक महल ऐसा दरशाया छिन में मुक्ति पाई ॥६॥

कवित्त

दीन मलीन अधीन है अंग, विहंग परयो क्षित खिन्न दुखारी
राघव दीनदयालु कृपालु को, देख दुखी अरुणा भई भारी॥
गीध को गोद में राखि कृपनिधि, नैन सरोजन में भरिवारी।
बार ही बार सुधारत पंख, जटाय की धुर जटान सूं झारी॥

ऐसे बिहाल विवायन सों भये, कण्टक जाल लगे पुनि जोये
हाय महा दुःख पायो सखा, तुग आये इतै न किते दिन खोये
देखि सुदामा की दीन दशा, करुणा करके करुणानिधि रोये
पानी परातको हाथ छूयो नहीं, नयननके जल सों पग धोये

मानस हौं तो वही रस खान बसों, ब्रज गोकुल गांवके ग्वारन।
जो पशु हों तो कहाबश मेरो, चरों नित नन्दकी धेनु मझारन

पावन हों तो वही गिरी के धरचो, कर छत्र पुरन्दर धारन।
जो खगहों तो वसेरो करो मिल, कालिन्दी कुल कदम्बकीडारन

शेष महेश गणेश दिनेश सुरेश हू, जाहि निरन्तर ध्यावें।
जाहे अखन्ड अनदि अनन्त, अछेद्य अभेद्य सुभेद्य बतावें।
नारद से शुक व्यासरटैं, पचि हारे तेहू पुनिपार न पावें।
ताहे को अहीरकी छोकरियां छछिया भर छाछपै नच नचावें

गऊ के प्रताप स्वर्गलोक को निवास मिले,
गऊके प्रताप यमराज ना छवैय्या है।
गऊ के प्रताप भवसागर से पार होत,
गऊ के प्रताप खात दूध और मलैय्या है॥
गऊ के प्रताप हाल मुक्ति तेरी होत लाल,
गऊ के प्रताप मिलें नन्द को कन्हैया है,
काम धेनु मैया दूध की दिवैया जरा दया करो भैया,
यह आखिर में गैया है॥

छोटी सी बछिया पार के परवस्त करि,
तीन वर्ष तांई अपने हाथ तैं चराई है।
चौथा वर्ष लागो जब ग्याभन की आशा भई,
नौवें महीने पीछे घर ही में व्याई है॥

दूध दही घृत छाछ किये तेरे चारों स्वाद,
खोवा और रवड़ी खाई दूध की मलाई है।
अरे अन्याई कहां कुमति कमाई,
कहां ले चलौ कसाई तोहे शरम न आई है॥

सवैया

पग नपुर पहुंची करंक जनी, अरु मँजु बनी मांणमाल हिय
नवनीत कलेवर पीत झगा, झलके पुल के नृप गोद लिये॥
अरविन्द सो आनन रूप मरन्द, आनन्दित लोचन भृंग पिये
मन में न बसो अस बालक जो, तुलसी जग में फल कौन जिये

दोहे।

सहजो गुरु प्रसन्न हों, मूंद लिये दाउ नैन।
फिर मोसूं ऐसे कह्यो, समझ लेऊ यह सैन॥१॥
चींटी जहाँ न चढ सके, सरसों ना ठैराय।
सहजो को वा देश में, सत्गुरु दई बसाय॥२॥
प्रेम बिना धीरज नहीं, विरह बिना वैराग।
सत्गुरु बिना मिटे नहीं, मन मनसा का दाग॥३॥
नैनों की कर कोठरी, पुतली पलँग बिछाय।
पलकों की चिक डाल के, पिया को लिया रिझाय॥४॥

कथनी के सूरे घने, थोथे बान्धे तीर ।
प्रेम चोट जिनके लगै, तिनके विकल शरीर ॥५॥
प्रीति बहुत सँसार में, नाना विधि की सोय ।
उत्तम प्रीति सो जानिये, जो सत्गुरु से होय ॥६॥
सुरता मांहीं जप करे, तन सूं न्यारो जौन ।
मिले सच्चिदानन्द में, गहे रहे जो मौन ॥७॥
हम तुम्हारो सुमरिन करैं, तुम चितवत मोहि नाहिं ।
सुमरिन मनकी प्रीति है, सो मन तुमही माहिं ॥८॥
दया नम्रता दीनता, क्षमा शील सँतोष ।
इन को ले सुमरिन करै, निश्चय पावे मोक्ष ॥९
दादू नीका नाम है, आप कहै समझाय ।
और आरम्भ सो छोड़ कर, हरि जी से चित लाय ॥
आयो प्रभु शरण गति कृपासिन्धु दयाल ।
एक अक्षरहर मन बसे नानक होत निहाल ॥११॥
तुलसी विलम न कीजिये भजिये राम सुजान ।
जगत मजूरी देत है क्यों राखे भगवान् ॥१२॥
बेर २ नहीं पाइये सुन्दर मानुष देह ।
राम भजन सेवा सुकृत ये सौदा कर लेय ॥१३॥
कबीर सोई मुख धन्य है जिहि मुख निकसे राम ।
देही किस की बापुरी हो पवित्र है ग्राम ॥१४॥

कलियग सम युग आन नहीं जो नर करहिं विश्वास ।
गाई राम गुण गण विमल भव तर बिना प्रयास ॥१६
जासु नाम भव भेषज हरण ताप त्रय शूल ।
सो कृपाल मोहिं तोहि पर सदा रहहिं अनुकूल ॥१७
सहजो भज हरि नाम को तजो जगत सूं नेह ।
अपना कोई है नहीं अपनी सगी न देह ॥१८॥
जामें जाकी प्रीति हो रटिये वारम्बार ।
सब देवन का नाम बल धरे शेष भू भार ॥१९॥
अनामेल धोखे लियो जाने सब संसार ।
बालमीक भये ब्रह्म सम उलटो नाम विचार ॥२०॥
परमानन्द स्वरूप तू नहीं तो में दुःख लेश ।
अज अविनाशी ब्रह्म चित्त क्यों मानों हिय क्लेश ॥
आप भुलानो आप में बनयों आप ही आप ।
जाको तू ढूंढत फिरे सो तू आप ही आप ॥२२॥
राग द्वेष मन के धरम तू तो मन नहीं होय ।
निर्विकल्प व्यापक अमल सुख स्वरूप तू सोय ॥२३॥
जैसे सांचे में परयो होत कनक बहु अङ्ग ।
नानावत् यों ब्रह्म में लय उपाधि को सँग ॥२४॥
ज्यों तिल मांहि तेल है ज्यों चकमक में आग ।
तेरा प्रीतम तुझ में जाग सके तो जाग ॥२५॥

भेद ज्ञान तौलों भलो जोलों मुक्ति न होय ।
परम जात पर घर भई तब विकल्प नहिं होय ॥२६
तू है सो परमात्मा मैं हूं ब्रह्मस्वरूप ।
यही आत्मा ब्रह्म है जीव है ब्रह्म स्वरूप ॥२७॥
पिञ्जर प्रेम प्रकाशिया जागी ज्योति अनन्त ।
सँशय छूटा भय मिटा मिला पियारा कन्त ॥२८॥
सत चित् आनन्द एक तू ब्रह्म अजन्य असँग ।
विभु जेतन माया करै जग को उत्पत्ति भँग ॥२९॥
सब ही क भीतर बसे सब का जानन हार ।
वाही ते प्रकटत भई नाना वस्तु अपार ॥३०॥
देह मरे तू है अमर पार ब्रह्म है सोय ।
अज्ञानी भटकतफिरै लखे सो ज्ञानी होय ॥३१॥
देह नहीं तू ब्रह्म है अविनाशी निर्वान ।
नित न्यारो तू देह से देह कर्म सब जान ॥३२॥
डोलन बोलन सो बनो भक्षण करन अहार ।
दुःख सुख मैथुन रोग सब गर्मी शीत निहार ॥३३
जाति वर्ण कुल देह की सूरती मूरती नाम ।
उपजै विनशै देह सों पांच तत्व को ग्राम ॥३४॥
पावक पानी वायु है धरती अरु आकाश ।
पांच तत्त्वके कोट में आय कियो तैं वास ॥३५॥

निराकार निर्लिप्त तू देह जान आकार ।
आपन देही मान मत यही ज्ञान तत सार ॥३६॥
गले कटै काया यही बनै मिटै फिर होय ।
जीव अविनाशी नित्य है जाने विरला काय ॥३७॥
चेतन ज्यों की त्यों सदा, सदा अकर्ता जोय ।
सब कर्मन सों रहित है आतम ऐसो होय ॥३८॥
काहूते उपज्यो नहीं वाते भयो न कोय ।
वह न मरै मारै नहीं राम कहावै सोय ॥३९॥
सत् चेतन आनन्द है आदी अन्त मध्य हीन ।
आदि अन्त अकार को सो तू झूठी चीन ॥४०॥
इन्द्रिय जान सकै नहीं मन बुद्धि लहे न ताय ।
ज्ञान दृष्टिपहिचानिये वासों वाको पाय ॥४१॥
सब में देखे आप कूं सब कूं अपने मांहि ।
पावे जीवन मुक्त को या में शँसय नाहिं ॥४२॥
जल थल पावक राम है राम रमो सब मांहिं ।
हरि सब में सब राम में और दूसरो नाहिं ॥४३॥
ऊँच नीच निर्गुण गुणी रँक नाथ अर भूप ।
हूँ घट वढ़ कासों कहूँ सब आनन्द स्वरूप ॥४४॥
शस्त्र छेद सके नहीं पावक सके न जारि ।
मरै मिटै सो तू नहीं गुरु गम भेद निहारि ॥४५॥

नहीं कारण कार्य कछु नहीं काल नहीं देश ।
शिव स्वरूप पूरण अचल सजाति विजाति न लेश ॥
अज्ञ तज्ञ नहीं शुभाशुभ नहीं ईश्वर नहीं जीव ।
सत्य झूठ मो में नहीं अमल समल त्रिय पीव ॥४७॥
जैसे दिनकर के उदय दीपक द्युति दुरि जात ।
तैसे ब्रह्मानन्द में आनन्द सबै बिलास ॥४८॥
क्षुधा पिपासा हर्ष पुनि शोक जन्म अरु अन्त ।
ये षट उरमी धरम धन आतम रहित अनन्त ॥४९॥
बसन भयो ता सूत में सूतन खिसन मँझार ।
आपस में फूतरी सबै करत परस्पर रार ॥५०॥
ज्ञानी करे अनेक कर्म विधिवत जय व्यवहार ।
लिये न धूम आकाश ज्यों जान्यो जगत असार ॥५१
जाग्रत स्वप्न जहां नहीं जहां सुषुप्तिमन लीन ।
मैं तू तहां न सम्भवे आतम निश्चय कीन ॥५२॥
जाग्रत माहिं सुषुप्तिमतवारे की केल ।
करे चेष्टा बाल ज्यों आत्म सुख रहो झेल ॥५३॥
जैसे भूजे अन्त में उद्भूवता भई छीन ।
तैसे आतमवान की भई जगत मति लीन ॥५४॥
जो ताकी पूजा करत सज्जित सुकृत सुलेत ।
दोष दृष्टितिहीं जो लखे ताहि पाप फल देत ॥५५॥

हेतु मोक्ष को ज्ञान इक नहीं कर्म नहीं ध्रान ।
रज्जु सर्प तब ही नशै होय रज्जु को ज्ञान ॥५६॥
जगत खेदी में परौ जिन केवल दुख ता महिं ।
सत्य सत्य पुनि सत्य कहूँ सुख स्वप्ने हू नाहीं ५७॥
सहजो भज हरि नाम को तजो जगत सूंनेह ।
अपना कोई है नहीं अपनी सगी न देह ॥५८॥
यही कहैं गुरु देव जी यही पुकारें सन्त।
सहजो तज या जगत को तोहि तजेंगे अन्त ॥५९॥
जब लग चावल धान में तब लग उपजे आय ।
जग छिलके को तज निकस मुक्त रूप होजाय ॥६०॥
कुटुम्ब सँघाती बीच में आदि अन्त नहीं होय ।
बीच मिले बीच ही गये सहजो संग न कोय ॥६१॥
सहजोस्वारथ सब लगे दारा सुत और वीर ।
जीवत जोतै बैल ज्यों मुये बटावें सीर ॥६२॥
सहजोजीवत सब सगे मुये निकट नहीं जायँ ।
रोवें स्वारथ आपने स्वपने देख डरायँ ॥६३॥
स्वाँस खजानो जात है ताकी सुधी नांही ।
सहजो खर्चो कहा रहे कर हिसाब घर माहीं ॥६४
झुर झुर के पिंजरा भये रोय गमाये नैन ।
मर गये सो नाहीं मिलै सहजो सुनै न बैन ॥६५॥

जो रोवे सो बहुरे तो रोवे दिन रात।
तन छीजे वह ना मिले सहजो कूड़ी बात ॥६६॥

वेदमंत्राणी।

अप नः शोशुचदघमग्ने शुशुग्ध्यारयिम्।
अपः नः शोशुचदघम् ॥ १ ॥

हे अग्ने ; आप हमारे पाप का वार२ निवारण किजिये,

धनको अच्छे प्रकार शुद्ध कराइये तथा हम लोगों के पाप की शुद्धि के अर्थ दण्ड दीजिये ॥१॥

सुऽक्षेत्रिया सुगातुया वसूया च यजामहे ।
अप नः शोशुचदघम् ॥ २ ॥

हेअग्ने जिस से धनकी चाहना हो जिस में अच्छी पृथिवी हो और जो अच्छा खेत हो उस में हम लोग संग देते हैं, वे आप हम लोगों के दुष्ट व्यसन को दूर कीजिये ॥२॥

प्रयद भन्दिष्ठ एषां प्रास्माकासश्च सूरयः ।
अप नः शोशुचदघम् ॥ ३ ॥

हे अग्ने आप की सभा में इन के बीच हम लोगों से, अत्यन्त बुद्धिमान विद्वान् सभासद हो अति कल्याण, करने हारे आप हम लोगों के दुःख रूप पाप को दूर कीजिये ॥३॥

प्र यत्ते अग्ने सूरयो जाये महि प्र ते वयम् ।
अप नः शोशुचदघम् ॥ ४ ॥

हे अग्ने ! जो आप के पूर्ण विद्यावन्त सभासद हैं वैसे ही हम लोग भी हों । तुम हम लोगों के विरोध्र

रूप पाप को अच्छे प्रकार दूर कीजियेगा ॥ ४ ॥

प्र यदग्ने सहस्वतो विश्ततो यन्ति भानवः ।
अप नः शोशुचदघम् ॥ ५ ॥

हे विद्वानो ! जिस प्रशंशित बल वाले भौतिक अग्नि की किरण सब जगह से फैलती हैं जो हम लोगों के पाप को दूर करता है ॥ ५ ॥

त्वं हि विश्वतोमुख विश्वतः परि भूरसि ।
अप नः शोशुचदघम् ॥ ६ ॥

हे जगदीश्वर आप ही सब ओर से सब के ऊपर विराजमान हैं इस से हम लोगों के पाप को दूर कराइये।

द्विषो नो विश्वतो मुखाऽतिनावेव पारय ।
अप नः शोशुचदघम् ॥ ७ ॥

हे परमात्मन् जैसे नाव से समुद्र को पार हों वैसे हम लोगों को विरुद्ध चलने वाले उन से पार पहुंचाइये और हम लोगों के पापों को दूर कीजिये ॥ ७ ॥

स नः सिन्धुमिव नावयाति पर्षा स्वस्तये ।

अप नः शोशुचदघम् ॥ ८ ॥

ऋ० मं० १ सू ९७ मं० १-८

हे जगदीश्वर सो आप कृपा करके हम लोगों के सुख के लिये नाव से जैसे समुद्र को पार होते हैं वैसे दुखों के अत्यन्त पार कीजिये और हम लोगों के पाप को दूर कीजिये ॥ ८ ॥

वैश्वानरस्य सुमतौ स्याम राजा हिकं भुवनानामभिश्रीः। इतो जातो विश्वमिदं विचष्टे वैश्वानरो यतते सूर्येण ॥ ९ ॥

ऋ९ मं० १ स ९८ मं० १

जो वैश्वानर प्रसिद्ध हुये इस प्रत्यक्ष सुख को व समस्त जगत् को विशेष भावसे दिखलाता है और जो सूर्य लोक के साथ यत्न करने वाला होता है, जो लोकों का सब प्रकार से धन है जो अधिपति है उस भौतिक अग्नि की श्रेष्ठमति में ही हम लोग स्थिर हों ॥ ९ ॥

सनाद्दिवं परि भूमा विरूपे पुनर्भुवा युवती

स्वेभिरेवैः । कृष्णेभिरक्तोषा रुशाद्भिर्व-
पुर्भिरा चरतो अन्यान्या ॥ १०

ऋ० मं० १ सू० ६२ मं० ८

जैसे तुम सनातन कारण से आकाश और भूमि को प्राप्त होकर बार २ उत्पन्न होकर युवावस्था को प्राप्त हुए स्त्री पुरुष के समान विविध रूप से युक्त रात्रि दिन दक्षिण आदि अवयव प्राप्ति के हेतु रूपादि गुणों के साथ शरीर वा परस्पर आकर्षणादि को प्राप्त करने वाले गुणों के साथ भिन्न २ परस्पर मिलते हुए जाते आते हैं। वैसे स्वयंवर से विवाह करके एक दूसरे के साथ प्रीति युक्त हो के सदा आनन्द में वत ॥ १० ॥

सैनेव सृष्टाम दधात्यस्तुर्न दिद्युत्त्वेष
प्रतीका । यमो ह जातो यमो जनीत्वं
जारः कनीनां पतिर्जनीनाम् ॥ ११ ॥

ऋ० मं० १ सू० ६६ मं० ४

हे मनुष्यो जो नियम करने वाला, प्रकट, सर्वथा नियम कर्त्ता, जन्मादि कारण युक्त, कन्यावत् वर्त्तमान

रात्रियों के आयु का हनन कर्त्ता, सूर्य के समान उत्पन्न हुई प्रजाओं का पालन कर्ता, प्रेरित, अच्छी शिक्षा को प्राप्त हुई बीर पुरुषों की विजय करने वाली सेना के समान शत्रुओं के ऊपर शस्त्र अस्त्र चलाने वाले दीप्तियों के प्रतीत करने वाले बिजली के समान अपरिपक्व विज्ञान युक्त जन को धारण करता है उसका सेवन करो ॥ ११ ॥

आदित्ते विश्वे क्रतुं जुषन्त शुष्कादयद्वेव जीवो जनिष्ठाः । भजन्त विश्वे देव त्वं नाम ऋत सतपन्तो अमृतमेवैः ॥ १२

ऋ० मं० १ सू० ६८ मं० २

हे जगदीश्वर ! आप का आश्रय करके जो सब अतिज्ञान युक्त एक विद्वान् लोग प्राप्ति कारक गुणों और धर्मानुष्ठान के तप से आप के दिव्य गुण प्राप्त करने वाले बुद्धि और कर्म प्रसिद्ध अर्थ युक्त संज्ञा को सिद्ध प्रीति से सेवाकरें वे सत्य रूप को सेवन करते हैं वैसे मोक्ष को इच्छादि गुणवाला चेतन स्वरूप मनुष्य इस के अन्तर ही इस सब को प्राप्त हो ॥ १२ ॥

शुक्र शुशुक्वाँ उषो न जारः पप्राः समीची

दिवो न ज्योतिः । परि प्रजातः क्रत्वा बभूथ भुवो देवानां पिता पुत्रः सन् ॥१३

ऋ० १, ६६, १

जो मनुष्य प्रातः काल की बेला के आयु के हन्ता सूर्य के समान बीर्यवान, शुद्ध, अपनी विद्या से पूर्ण भूमि के मध्य प्रकाश से पृथिवी को प्राप्त हुए दीप्ति के समान सब प्रकार प्रसिद्ध उत्पन्न उत्तम बुद्धि वा कर्म्म के साथ वर्त्तमान विद्वानों के पुत्र का पिता (पढ़ाने वाला) होता है उस का सेवन सब मनुष्य करें ॥ १३ ॥

देवो न यः पृथिवी विश्वमाया उपक्षेति हितमित्रो न राजा । पुरः सदः सर्म्मसदो न वीरा अनवद्या पतिजुष्टेव नारी ॥१४

जो देवता भूमि के समान विश्व को धारण करने वाले मित्रों को धारण किये हुए राजा के समान जानता है तथा प्रथम युद्ध के जानने, मुख में स्थिर होने और युद्ध में शत्रुओं के फेंकने वाले के समान तथा विद्यासौन्दर्यादि शुद्ध गुण युक्त नारी जो पति की सेवा करने वाली उसके समान सुखों में निवास कराता है उस को सदा सेवन

करो ॥ १४ ॥

उत ब्रुवन्तु जन्तव उदग्निर्वृत्र हाजनि ।
धनञ्जयो रणे रणे ॥ १५ ॥

जो युद्ध में धन से जिताने वाला मेघ को नष्ट करने हारे सूर्य के समान परमेश्वर शुभ गुणों के दान करने वाले मनुष्यों के लिए धन उत्पन्न करता है और सब मनुष्य हिंसा रहित उसी के विचार को परस्पर उपदेश कर ॥ १५ ॥

विचार सागर ।

अथ वस्तुनिर्देशरूप ।

अथ वस्तु मंगल ॥ दोहा ॥

जो सुख नित्य प्रकाश विभु नाम रूप आधार ॥ मति न लखै जिहिं मति लखै, सो मैं शुद्ध अपार ॥१॥ अब्धि अपार स्वरूप मम, लहरी विष्णुमहेश ॥ विधि रविचंदावरुणयम शक्ति धनेशगणेश ॥२॥ जा कृपालु सर्वज्ञको, हिये धारत मुनी ध्यान ॥ ताको होत उपाधिते, मोमैं मिथ्या भान ॥३॥ व्है जिहिं जाने बिन जगत, मनहुजेवरीसांप ॥ नशै भुजङ्ग जग जिहिं लहे, सोऽहं आपैआप ॥४॥ बोध चाहि जाको सुकृति, भजत राम निष्काम ॥ सो मेरो है आतमा, काकूं करुं प्रणाम ॥५॥

॥ ग्रंथ महिमा ॥ दोहा ॥

भर्यो वेद सिद्धांत जल, जामैं अतिगंभीर ॥ अस विचार सागर कहूं पेखि मुदित व्है धीर ॥६॥ सूत्र भाष्य वार्तिक प्रभृति, ग्रंथ बहुत सुरबानी ॥ तथापि मैं भाषा करूं लखि मतिमंद अजानी ॥७॥ कविजनकृत भाषा बहुत, ग्रंथ जगत

विख्यात ॥ बिनविचारसागरलख नहिं संदेह नशात ॥८॥

॥ अनुबंधनाम ॥ चौपाई ॥

नहिंअनुबंधपिछानैजौलौं । व्हैनप्रवृत्तसुधरनरतौलौं ॥ जानि जिनै यह सुनै प्रबंधा । कहूंव यातैंते अनुबंधा ॥९॥

॥सोरठा॥

अधिकारी संबंध, विषय प्रयोजनमेलि चव ॥ कहत सुकवि अनुबंध, तिनमें अधिकारी सुनहु ॥१०॥

॥ अधिकारी वर्णन ॥ दोहा ॥

मल विछेप जाके नहीं, किंतु एक अज्ञान ॥ व्हैचवसाधनसहित नर, सोअधिकृतमतिमान ॥११॥

॥ च्यारिसाधन वर्णन ॥ दोहा ॥

प्रथम विवेक विराग पुनि, शमादी षट संपत्ति ॥ कही चतुर्थ मुक्तता, ये चव साधन सक्ति ॥१२॥ अविनाशी आतम अचल जग जाते प्रतिकूल ॥ ऐसो ज्ञान विवेक है,सब साधनको मूल ॥१३॥ ब्रह्मलोक लौं भोगजो, चहै सबनको त्याग ॥ वेद अर्थ ज्ञाता मुनी, कहत ताहि वैराग ॥१४॥ शम दम श्रद्धा तीसरी, समाधान उपराम ॥ छठी तितिक्षा जानिये, भिन्न भिन्न यह नाम ॥१५॥ मन विषयन ते रोकनों

शम तिहिं कहत सुधीर ॥ इन्द्रियगण को रोकनों, दम भाषत बुधवीर ॥१६॥ सत्य वेद गुरु वावय हैं, श्रद्धा अस बिश्वास॥ समाधान ताकूं कहत, मन विछेपको नाश ॥१७॥

॥ चौपाई ॥

साधनसहित कर्म सब त्यागै । लखि विष सम विषनयतैं भागै ॥ दृग नारी लखि व्है जिय ग्लाना । यह लक्षण उपराम॥ बखाना ॥१८॥

॥ दोहा ॥

आतप शीत क्षुधा तृषा, इनको सहनस्वभाव ॥ ताही तितिक्षा कहतहैं, कोविद मुनिवरराव ॥१९॥ शमादिषट् सम्पति, भाषत साधन एक ॥ इम नव नहिं साधन भनै किंतु च्यारी सविवेक ॥२०॥ ब्रह्मप्राप्ति अरु बंधकी, हानि मोक्षको रूप ॥ ताकी चाह मुमुक्षुता, भाखत मुनिवरभूप ।२१ ये चव साधन ज्ञानके श्रवणादिक त्रय मेलि ॥ तत्पदत्वंपद अर्थको शोधन अष्टम भेलि ॥२२॥

॥ अंतरंग और बहिरंग साधन ॥दोहा॥

अंतरंग ये आठ हैं यज्ञादिक बहिरंग ॥ अंतरंग धारे तजै बहिरंगनको संग ॥२३॥

॥अथ संबंध वर्णन । दोहा॥

प्रतिपादक प्रतिपाद्यता, ग्रंथ ब्रह्म संबंध ॥ प्राप्य प्रापकता

कहत, फल अधिकृतको फंद ॥२४॥

॥अथ विषय वर्णन ॥ दोहा ॥

जीवब्रह्मकी एकता, कहत विषय जनबुद्धि ॥ तिनको जे अंतर लहैं, ते मतिमंद अबुद्धि ॥२५॥

॥अथ प्रयोजन वर्णन ॥ दोहा ॥

परमानंद स्वरूपकी, प्राप्ति प्रयोजन जानि ॥ जगत समूल अनर्थ पुनि, व्है ताकीअतिहानि ॥२६॥

॥ शंकापूर्वक उत्तरका कवित्त ॥

जीवको स्वरूप अति अनँद कहत बेद । ताकूं सुखप्राप्तिको असँभव वखानिये । आगे जो अप्राप्त वस्तु ताकी प्राप्ति सँभवत,नित्य प्राप्त वस्तुकी तौ प्राप्ति किमिमानीये ॥ ऐसी शँका लेश आनि कीजे न विश्वास हानि,गुरुके प्रसादतैं कुतर्क भले भानिये । करको कँकन खोयो ऐसो भ्रम भयो जिहिं, ज्ञानतैं मिलत इमि प्राप्तप्राप्ति जानिये ॥२७॥

॥ दोहा ॥

अधिष्टानते भिन्न नहिं, जगत निवृत्ति बखान ॥ स निबृत्ति रज्जुजिमि, भये रज्जुको ज्ञान ॥२८॥ जो जन प्रथम तरँग यह, पढै ताहि तत्काल ॥ करहु मुक्त गुरुमर्तिव्है, दादू दीनदयाल ॥२९॥

॥ द्वितीयस्तरङ्गः ॥

॥ अथानुबन्ध विशेष निरूपणम् ॥

॥ दोहा ॥

याके प्रथमतरँगमैं, किय अनुबँध विचार ॥ कहूँ व द्वितीयतरँग मैं तिनहीको विस्तार ॥१॥

॥ अधिकारी खंडन पूर्वपक्ष ॥दोहा ॥

मूलसहित जग ध्वंसकी, कोउ करत नहीं आश ॥ किंतु विवेकी चहत है त्रिविधिदुःखको नाश ॥२॥

किय अनुभवजा वस्तुको, ताकी इच्छा होइ ॥ ब्रह्म नहीं अनुभूत इम,च है न ताकूं कोई ॥३॥ चहत बिषयसुख सकल जन,नहीं मोक्षकोपँथ ॥ अधिकारी यातैं नहीं, पढै सुनै जो ग्रँथ ॥४॥

विषयखंडन पुर्वपक्ष ॥ दोहा ॥

जीवब्रह्म की एकता, कह्यो विषय सो कूर ॥ क्लेशरहित विनुब्रह्म इक, जीव क्लेशको मूर ॥५॥

प्रयोजन खंडन पुर्वपक्ष ॥ दोहा ॥

बँधनिबृत्तिज्ञानते, बनै न बिन अध्यास ॥ सामाग्री ताकी नहीं, तजोज्ञानकी आस ॥६॥ सत्य वस्तुके ज्ञानतैं सँसकार इक जान ॥ त्रिविधदोषअज्ञान पुनि, सामिग्रपहिचान ॥७॥ सत्यबँधकी ज्ञानत, नहिं निबृत्ति सँयुक्त ॥ नित्यकर्म सँततकरै, भयो चहै जो मुक्त ॥८॥ मूलसहितजगहानिबिन, व्हैनत्रिविधदुःखध्वँस ॥ याते जन चाहत सकल, प्रथम मोक्षको अँस ॥९॥

॥ समाधान कहैहैं ॥ दोहा ॥

किय अनुभवसुखकोसवही, ब्रह्म सुन्यो सुखरूप ॥ ब्रह्मप्राप्ति या हेतुतैं, चहत विवेकी भूप ॥१०॥ केवलसुख सब जन चहैं, नहीं विषयकी चाह ॥ अधिकारी यतैं बनै, व्हैजु विवेकी नाह ॥११॥

॥ विषय मंडन ॥ दोहा ॥

साक्षी ब्रह्मस्वरूप इक, नहीं भेदको गंध ॥ रागद्वेष मतिके धरम, तामैं मानत अंध ॥११॥

॥ कर्यअध्यासनिरुपण ॥ कवित्त ॥

सजातीयज्ञान संसकार तें अध्यास होत । सत्यज्ञानजन्य

संसकारको न नेमहै ॥ दोषको न हेतुता अध्यास विषे देखियत पटविषे हेतु जैसे तुरी तंतु वेम है ॥ आतमा द्विजाति शंख पीत सिता कटु भासे सीपमें विरागी रुप देखे बिन प्रेम है ॥ नभ नील रूपवान भासत कटाह तम्बूजिनके न कोउ पित्त प्रभृति अक्षेम है ॥१३॥

॥ कारणअध्यासनिरूपण ॥

चित्त सामान्य प्रकाशते, नहीं नशे अज्ञान। लहै प्रकाश सुषुप्तिमैं, चेतनतैं अज्ञन ॥१४॥

॥ संबंध मंडन ॥ दोहा ॥

दादूदीनदयाल जू, सत सुख परमप्रकास ॥ जामैं मतिकी गति नहीं, सोई निश्चलदास ॥१५॥

॥ अथ तृतीयस्तरङ्गः ॥

॥ दोहा ॥

पेख चयरी अनुबन्धयुत, पढै सुनै यह ग्रंथ ॥ ज्ञानसहित गुरु से जु नर, लहैं मोक्षको पंथ ॥१॥ अनायासहिमति भूमिमैं ज्ञान चिमन आबाद ॥ व्है इहिंकारन कहत हूं गुरु शिष्य संवाद ॥२॥

॥ चौपाई ॥

वेदअर्थकूं भलेपिछानै, आतम ब्रह्मरूप इकजनै ॥ वेदपंचकी

बुद्धिनशाव, । अद्वयअमल ब्रह्म दरशाव ॥३॥ भवमिथ्या मृगतृषा समाना । अनुलब इम भाखत नहिं आना ॥ सो गुरु दे अमृत उपदेशा, छेदक सिखा न लुंचित केशा ॥४॥

॥दोहा॥

करत मोक्ष भवग्राहते, दे असि निज उपदेश ॥ सोदैशिक बुधजन कहत, नहिंकृत गौरिकवेष ॥५॥ दैशिकके लक्षण कहे, श्रुतिमुनि वच अनुसार ॥ सो लक्षण है शिष्यके, व्हैजिनते अधिकार॥६॥ ईश्वरतैं गुरुमैं अधिक, धारै भक्ति सुजान ॥ बिन गुरुभक्ति प्रवीनहु, लहै न आतमज्ञान ॥७॥ वेद उदधि विनगुरु लखै, लागै लौन समान । वादर गुरुमुख द्वारव्है, अमृतसै अधिकान ॥८॥ दृतिपुटघट सम अज्ञजन, मेघसमान सुजान ॥ पढै वेदइहिं हेतुतैं, ज्ञानीपै तजि आन ॥९॥

॥ समाधान का दोहा ॥

ब्रह्मरूप अहि ब्रह्मवित ताकी वाणी वेद ॥ भाषा अथवा संसकृत, करत भेद भ्रम छेद॥१॥ वाणीजाकी वेदसम, कीजै ताकी सेव ॥ है प्रसन्न जब सेवतैं, तब जानै निज भेव ॥२॥

॥सोरठा॥

व्है जबही गुरुसंग, करै दंडजिम दंडवत ॥ ...

अङ्ग, पावन पादसरोज रज ॥१॥

॥ चौपाई ॥

गुरु समीप पुनि करिये वासा । जो अति उत्कट वहै जिज्ञासा ॥ तन मन धन वच अर्पी देवै । जो चाहै हिय बँधन छेवै ॥१३॥

॥तन- मन- धन अर्पण प्रकार ॥चौपाई॥

तन करि बहु सेवा विस्तारै । आज्ञा गुरुकी कबहु न टरै ॥ मन में प्रेम रामसम राखै । वहै प्रसन्न गुरु इम अभिलाखै ॥१४॥ दोषदृष्टि स्वपनै नहिं आनैं । हरिहर ब्रह्म गंग रवि जानै ॥ गुरु मूरति को हियमैं ध्याना । धारे जो चाहै कल्याना ॥१५॥ पत्नी पुत्र भूमी पशु दासी । दास द्रव्य ग्रह व्रीहि विनाशी ॥ धनपद इन सबहिन कुं भाखै । वहै गुरु शरण दूरि तिहि नाखै ॥१६॥

॥सोरठा॥

धन अर्पणको भेद, एक कह्यो सुन दूसरो ॥ वहै गृहस्थ गुरुदेव, याज्ञवल्क्य सम देह तिहिं ॥१७॥

॥ वाणी अर्पण प्रकार ॥ छंद ॥

भाखत गुणगण गुरुके बानी शुद्ध। दोष न कबहूं अर्पण

॥ सोरठा ॥

जो चाहै कल्याण, तन मन धन बच अरपिइम ॥ बसै बहुत गुरुस्थान, भिक्षातै जीवन करै ॥१९॥

॥ चौपाई ॥

सो भिक्षा धरि दै शिष्य आगै। निज भोजनकूं नहिं पुनि मांगै। जो गुरु दे इतु जाठरडारै। नहिं दूजेदिन हत्ति संभारै ॥२०॥

॥ दोहा ॥

पुनि गुरुके आगे धरै, भिक्षा शिष्य सुजान ॥ निर्वेदन जियमें करै, जो निज चहै कल्यान ॥२१॥

॥ चौपाई ॥

इम व्यवहृत अवसर जव पेखै। मुख प्रसन्न गुरु सन्मुख लेखै ॥ विनती करै दोऊ कर जोरी। गुरु आज्ञातैं प्रश्न बहोरी ॥२२॥

॥ दोहा ॥

तन मन धन बानी अरपि, जिहिं सेवत चित लाय। सकल रूप सों आपहैं, दादू सदा सहाय ॥२३॥

चतुर्थ स्तरङ्गः।

॥ दोहा॥

गुरु शिष के सँबादकी ...

जिज्ञासु जन, होत विचार प्रवीन ।। तीनि सहोदर बाल शुभ चक्रवति संतान ।। शुभसंतति पितुतिहिं नमै, स्वर्ग पताल जहान ।।२।। तत्त्वदृष्टि इक नाम अहि दूजो कहत अदृष्ट । तर्क दृष्टि पुनि तीसरो, उत्तम मध्य कनिष्ठ ।।३।।

॥ चौपाई ॥

बालपनो सब खेलत खोयो । तरुण पाय पुनि मदन बिगोयो । धारि नारि गृह मार प्रकाशी । भोग लहै तिहूं सब सुखराशी ।।४।।

॥ दोहा ॥

स्वर्ग भूमि पातालके, भोगहि सर्ग समाज ।। शुभसंतति निज तेजबल, करत राजके काज ।।५।। लहिअवसरइक तिहिंपिता निजहियरच्योविचार ।। सुखस्वरूप अज आतमा तसु भिन्न असार ।।६।। इहिं कारन तजि राज यह, जानू आतमरूप ।। स्वर्ग भूमि पातालके, तिहुँ पुत्रहि करी

॥ चौपाई ॥

अस विचार शुभ संतति कीना । मंत्रि पेखि तिहुं पुत्र प्रवीना ।। देशइकंत समीप बुलाये । निज बिरागके वचन सुनाये ।।८।। भाख्यो पुनी यह राज संभारहु । इक पाताल इक स्वर्ग सिधारहु ।। अपर बसहु काशीभुवि स्वामी । [illegible] जहं शिव अँतरयामी ।।९।। जिहिं मरतहि मुनि शिव

उपदेशा। अनयासहि तिहिं लोक प्रवेशा ॥ गंग अँग मनु कीर्ति प्रकासै। उत्तरवाहिनि अधिक उजासै ॥१०॥

॥ दोहा ॥

करहु राजइम भिन्न तिहुँ, पालहु निज निज देश ॥ बिन बिभाग भ्रातानकौ, भूमिकाज वहै क्लेश ॥११॥

॥ सवैया ॥

राजसमाज तजौं सबमैं अब जानि हिये दुःख ताही असारा। और तु लोक दुखी अपने दुख, मैं भुगत्यो जग क्लेश अपारा ॥ जे भगवान प्रधान अजान, समान दरिद्रन ते जन सारा ॥ हेतु विचार हिये जग के भग त्यागि लखं निज रुप सुखारा ॥१२॥ वाक्य अनंत कहे इम तात, सुने तिहुं भ्रात सुबुद्धि निधाना ॥ बैठि इकंत विचार अपार, भनै पुनि आपसमाहिं सुजाना ॥ दे दुःख मूल समाज हमें यह, आपभयो चह ब्रह्म समाना ॥ सोजन सोजन नागर बुद्धिकसागर, आगर दुःख तजै जु जहाना ॥१३॥

॥ दोहा ॥

यातैं तजै दुःखमूल यह, राजकरौ निज काज ॥ करि विचार इम गेहतैं, निकस्यो भ्रात समाज ॥१४॥ तिहुं खोजत सद्गुरु चले, धारि मोक्ष हिय काम ॥ अर्थसहित

किय तातको, शुभसंतति यह नाम ॥१५॥ खोजत खोजत देश बहु, सुरसरि तीर इकंत ॥ तरु पल्लव शाखा सघन, वन नामै इकसंत ॥१६॥बैठ्यो बट विटपहिं तरैं, भद्रमुद्रा धारि ॥ जीव ब्रह्मकी एकता, उपदेशत गुण टारि ॥१७॥ दोष रहित एकाग्रचित, शिष्य सँघ परिवार ॥ लखिदैशिक उपदेशहिय, चहुँधाकरतविचार ॥१८॥ मनहु शंभु कैलासमैं उपदेशत सनकादि ॥ पेखिताहितिहिंलहिशरणकरीदंडवत आदि ॥१९॥ कियोवास षटमास पुनि, शिष्यरीति अनुसार करी अधिक गुरुसेव तिहुं, मोक्षकाम हियधार ॥२०॥ व्है प्रसन्न श्रीगुरु तबै, ते पूछै मृदुबानी॥ किमि कारण तुमतात तिहुं,वसहुकौन कहआनी ॥२१॥ तत्वदृष्टि तब लखि हिये निज अनुजनकी सैन ॥ कहै उभयकर जोरी निज, अभि-प्रायके बैन ॥२२॥

॥तत्वदृष्टि उवाच॥ दोहा॥

भोभगवन हम भ्राततिहू, शुभ संतति तंतान ॥
लख्यो चहैं बहु भेवहिय, दीननवीन अजान ॥२३॥
जो आज्ञाव्है रावरी, तो व्है पूछि प्रविन ॥
आपदयानिधिकल्पतरु, हम अतिदुखित अधीन ॥२४॥

॥ श्रीगुरुरुवाच सोरठा ॥

सुनहु शिष्य मम बात, जो पूछहु तुम सो कहूं॥
लहो हिये कुशलात संशय कोउ ना रहै ॥२५

॥ दोहा ॥

गुरुकी लखी दयालुता, शिष्य हिये भो चैन ॥
काजसिद्ध निजमानिहिय, भावे सविनयबैन॥२६

॥ तत्वदृष्टिरुवाच ॥ चौपाई ॥

भो भगवन तुम कृपानिधाना। हौ सर्वज्ञ महेश समाना हम अजान मतिकछु न जानै। जन्मादिक संसृति भय मानै ॥२७॥ कर्म उपासन कीने भारी। और अधिक जग पाशी डारी ॥ आप उपाय कहौ गुरु देवा। वहै जातैं भवदुख कछेवा ॥२८॥ पुनि चाहत हम परमानंदा। ताको कहो उपाय सुछंदा ॥ जब कृपाकरि कहि हौ ताता। तब वहै है हमरे कुशलाता ॥२९॥

॥ गुरुका उत्तर ॥ दोहा ॥

मोक्षकाम गुरु शिष्यलखि, ताकोसाधन ज्ञान ॥ वेदउक्त भाषण लगे, जीवब्रह्म भिदभान ॥३०॥ परमानंद विलाप तूं, जो शिष्य चहै सुजान ॥ जन्मादिकदुखनाशगुनी, भ्राति

जन्यतिहिंमान ॥३१॥ परमानन्द स्वरूप तू नहिं तोंमैं दुख लेस॥ अज अविनाशीब्रह्मचित्, जिनआनैहियक्लेश ।३२

॥ तत्वदृष्टिरुवाच ॥ दोहा ॥

विषयसंग क्यो भान व्है जोमें अनंद रूप ॥ अबउत्तर याको कहौ, श्रीगुरु मुनीवर भूप ॥३३॥

॥ श्रीगुरुरुवाच ॥ चौपाई ॥

आतम विमुख बुद्धि जन जोई । इच्छा ताहि विषयकी होई ॥ तासूं चंचल बुद्धि बखानी । सुख आभास होइ तहं हानी ॥३४॥ जब अभिलाषित पदारथ पावै । तब मति छनक विक्षप नशावै ॥ तामै व्है अनंद प्रतिविंबा । पुनि छनमैं बहु चाह विडंबा ॥३५॥ तातै व्है थिरताकी हानी। सो अनंद प्रतिविंब नशानी ॥ विषयसंग अनंद जु होई । विन सतगुरु यह लखे न कोई ॥३६॥

॥ दोहा ॥

विषय संगतैं व्है प्रकट आतम आनंदरूप ॥ शिष्य सुनायो तोहिमैं, यह सिद्धांत अनूप ॥३७॥

॥ सोरठा ॥

सो तूं मोहि ब भाख, जोयामें शंका रही ॥ निज मति में मति राख, मैं ताको उत्तर कहुं ॥३८॥

॥ दत्व दृष्टिउवाच ॥ चौपाई ॥

भो भगवन तुम दीनदयाला । मेटयो मम संशय ततकाला ॥ यामें कछुक रही आशंका । सो भाखूं अब व्है निर्वङ्का ॥ ३६॥ आतमविमुख बुद्धि अज्ञानी । ताकि यह सब रीति बखानी ॥ ज्ञानी जनको कहौं बिचारा ॥ कोउ न तुम सम और उदारा ॥ ४० ॥

॥ श्रीगुरुवाच ॥ दोहा ॥

सुनहु शिष्य इक बात मम, सावधान मन कान ॥ हैं द्वैविध आतमविमुख, अज्ञानी रसुजान ॥ ४१ ॥ व्हैं विस्मृत व्यवहार में, कबहुंक ज्ञानीसंत ॥ अज्ञानी विमुखहि रहैं, यह तूं जान सिधंत ॥ ४२ ॥

॥ शिष्य उवाच ॥ चौपाई ॥

हे प्रभु परमानन्द बखान्यो । मेरो रूप सु मैं पहिचान्यो ॥ नहि तो मैं भवबंधन लेशा । कह्यो आप पुनि यह उपदेशा ॥४३ यामैं शंका मुहि यह आवै । जातैं तव वच हिय न सुहावै ॥ नहिं मोमें यहबंध प्रसारो । कहा कौन सौं आश्रय न्यारो ॥ ४४ ॥

॥ श्रीगुरुवाच ॥ सोरठा ॥

सुनहु शिष्य मम बानि, जातै तव शंका मिटै ॥ है
जगकी अतिहानी, तौ मोमै नहिं और नै ॥४५॥

॥ तत्त्वदृष्टिरुवाच ॥ दोहा ॥

जो भगवान कहुं है नहीं, जन्ममरण जगखेद ।
व्है प्रत्यक्ष प्रतितीवयुं, कहो आप यह भेद ॥ ४६ ॥

॥ श्रीगुरुवाच ॥ दोहा ॥

आत्मरूप अज्ञानतैं, व्है मिथ्या परतीति ।
जगत स्वप्न नभनीलता, रज्जुभुजंग की रीति ॥४७

॥ तत्त्वदृष्टिरुवाच ॥ चौपाई ॥

मिथ्या सर्प रज्जु में जैसै । भास्यो भव आतम मैं
तैसै ॥ कैसै सर्प रज्जु मैं भासै । यह संशय मन बुद्धि
विनासै ॥ ४८ ॥

असत ख्याति पुनि आतम ख्याति । ख्याति अन्यथा अरु
अख्याति ॥ सुने चारि मत भ्रमकी ठौरा । मानूं कौन
कहौ यह ठौरा ॥ ४९ ॥

॥ श्रीगुरुरुवाच ॥ दोहा ॥

ख्याति अनिर्वचनीयलखि, पंचमतिनतैं और ।
युक्तिहीन मतच्यारिरे, मानहु भ्रम की ठौर ॥ ५०

॥ शिष्यउवाच ॥ दोहा ॥

यह मिथ्या परतीति व्है, जामैं जनत अपार । सो
भगवन मोकूं कहौ, को याको आधार ॥ ५१॥

॥ श्रीगुरुरुवाच ॥ दोहा ।

तव निजरूप अज्ञानतैं, व्है मिथ्या जग भान ॥
अधिष्ठान आधारतूं, रज्जुभुजंग समान ॥ ५२ ॥

॥ शिस्यउवाच ॥ दोहा ॥

भगवन मिथ्या जगतको, दृष्टा कहिये कौन ।
अधिष्ठान आधार जो, दृष्टा होय न तौन ॥ ५३ ॥

॥ श्रीगुरुरुवाच ॥ चौपाई ॥

मिथ्या वस्तु जगतमैं जेहैं । अधिष्ठानमें कल्पित ते हैं
अधिष्ठानसो द्विविध पिछानहु इक चेतन दूजो जड
जानहु ॥५४॥ अधिष्ठान जड वस्तु जहां है । द्रष्टा तातैं भिन्न
तहां है ॥ जहां होय चेतन आधारा । तहां न द्रष्टा होवै

न्यारा ॥५५॥

॥ दोहा ॥

चेतन मिथ्या स्वप्नको, अधिष्ठान निर्धार ॥ सोई द्रष्टा भिन्न नहिं, तैसे जगतविचार ॥५६॥ इम मिथ्या संसार दुख, व्है तोमें भ्रमभान ॥ ताकीकहा निवृतितूं चाहै शिष्य सुजान ॥५७॥

॥ शिष्यउवाच ॥ चौपाई ॥

जग यद्यपि मिथ्या गुरुदेवा । तथापि मैं चाहू तिमि छेवा ।' स्वप्न भयानक जाकूं भासे । करि साधन जन जिम तिहि नासे ॥५८॥ यातें व्है जातै जगहाना । सो उपाय भाखो भगवना ॥ तुम समान सतगुरु ननि आना । श्रवण फूंक दे बंचकनाना ॥५९।

सो मैं कह्यो बखानि, जोसावधान तैं पूछियो ।' निज हिय निश्चयआनि, रहैनरंचखेकेदजग ॥६०॥

॥ दोहा ॥

निजआतम अज्ञनतैं है प्रतीत जगखेद ॥ नशै सु ताके बोधतैं यहभाषत मुनिवेद ॥६१॥ जगमोमैं नहिं"ब्रह्ममैं" अहंब्रह्म' यहज्ञान ॥ सोतोकूं शिषमैं कह्यो, नहिं उपायकोआन ।६२ कर्म उपासनते नहिं, जगनिदान तम नाश ॥ अंधकार जिम

गेह मैं नशै न बिन परकाश ॥६२
भाष्यो शिष उपदेश मैं जग भंजक हिय धारि ॥ जो यामें संशय रह्यो, सो तूं पूछ विचारि ॥६५

॥ शिष्यउवाच ॥ चौपाई ॥

भो भगवन जो कछु तुम भाख्यो । सो सब सत्य जानि हिय राख्यो ॥ जग निदान अज्ञान वखान्यो । ताको भंजक ज्ञान पिछान्यो ॥६५॥
ज्ञान रूप वर्णन पुनि कीना । जग मिथ्या सो में भलचीना सुखस्वरूप आतम परकास्यो । दया तिहारी सो मुहि भास्यो ॥६६॥
पुनि भाख्यो तूं ब्रह्म स्वरूपं । यह मैं लख्यो न भेद अनूपं ॥ यामैं मुहि शंका इक आवै । जीव ब्रह्म को भेद जनावै ॥६७॥

॥ शंकाकी ॥ चौपाई ॥

पुन्य पापका हू मैं कर्त्ता । जन्म मरण औ सुख दुख धर्त्ता ॥ और अनेक भांति जग भासै । चहूं ज्ञान अज्ञान जु माशै ॥६८॥
जो याते बिपरीत स्वरूपा । ताकूं ब्रह्म कहत मुनि भूपा ॥ कहो एकता कैसे जानूं । रूप बिरुद्ध हिये पहिचानूं ॥६९

सुनहु गुरु दूजो पुनिसंशै जीव ब्रह्म एकत्त्व प्रनंशै ॥ जीव एक वृक्ष मैं समद्वै पक्षी । फल भोगै इक दूजी स्वच्छी ७०
भोग रहित परकाश असंग । वेद वचन यह कहत प्रसंगा॥
कर्म उपासन पुनि बहु भाखै । जीव ब्रह्म यातें द्वय राखै ॥७१॥

॥ श्रीगुरुरुवाच ॥ चौपाई ॥

सुनहु शिष्य इक कहूं विचारा । व्है जातैं शँका निस्तारा ॥ घटाकाश इक जल आकाशा । मेघाकाश महा आकाशा ॥७२॥
च्यारी भेद ये नथ के जानहु । पुनि चेतन के तथा पिछानहु ॥
इक कूट जीव पुनि कहिये । ईशब्रह्म हिय जाने रहिये ७३
जब इनका तूं रूप पिछाने । निज शंका तब हि सब भानै ॥ यातै सुन इनको अब भेदा । नशै सुनत जन्मादिक खेदा ॥७४॥

॥ दोहा ॥

जलपूरित घठकूं जु है, जितनो नभ आकाश ॥
युक्ति निपुण पंडित कहैं, ताकूं घट आकाश ॥७५॥
जलपूरित घटमैं जु पुनि, है नभको आभास ॥ घटाकास

युत विज्ञजन, भाखत जल आकाश ॥७६॥
जो जलमैं आकासको, नहिं प्रतिबिंब लखाई ॥ थोरेमैं गंभीरता, व्है प्रतीत किहि भाई ॥७७॥
यातैं जलमैं व्योमको लखि आभासी सुजान । रूप रहित जिम शब्द तैं, व्है प्रतिध्वनि को भान ॥७८॥
जो मेघहि भवकास दे पुनि तामैं आभास तिन दोनूंकूं कहत हैं, बुधजन मेधाकास ॥७९॥
वर्षत मेघ अनंतजल, उदक सहित इहिहेत ॥ दकनहिंनुभ आभासबिन, इमप्रतिबिंब समेत ॥८०॥
बाहिर भीतर एक रस, व्यापक जो नभरूप ॥ महाकास ताकूं कहैं, कोविद बुद्धिअनूप ॥८१॥
चतु भाँति नभके कहै, लच्छन श्रुति अनुसार ॥ अब चेतन के सिष्य सुन, जासुं लहै विचार ॥८२॥
मति वा व्यष्टि अज्ञान कौ, अधिष्टान चैतन्य ॥ घटाकास सम मानि े.सो कूटस्थ अजन्य ॥८३॥
काम कर्मयुत बुद्धि मैं, जो चेतन प्रतिबिंब ॥ जीवक है विद्वान तिहिं, जल नभ तुल्य सबिंब ॥८४॥
अधिष्टान कूटस्थसैं, व्है आभास बहाल ॥ रक्त पुष्प ऊपर धन्यो स्फटिक होइ जिमलाला ॥८५॥
बुद्धिमाहि आभास जो, पुन्यपाप फल भोग ॥ गमन आग

मन सो करै नहिं चेतन मैं जोग ॥८६॥

मिथ्या नभ घट संग ज्युं, लहै क्रिया बहु भांति ॥ घटा
कास अक्रिय सदा, रहै एकरस शांति ॥८७॥

अथवा व्यष्टि अज्ञानमैं, जो चेतन आभास ॥ अधिष्ठान
कूटस्थयुत, कहै जीवपदतास ॥८८॥

चित् छाया माया विषै, अधिष्ठान संयुक्त ॥ मेघ व्योम
सम ईस सो, अंतरयामी युक्त ॥८९॥

अँतर बाहिर एकरस, जो चेतन भरपूर ॥ विभुनभ सम
सो ब्रह्म है, नहिं नेरै नहिं दूर ॥९०॥

चतुभाँति चेतन कह्यो, तामैं मिथ्या जीव ॥ पुन्य पाप फल
भोगवे, चित कूटस्थ सु सीव ॥९१॥

कर्मा छाया देत फल, नहिं चेतन मैं जोग ॥ सो असंग
इकरूप है जानै भिन्न कुलोग ॥९२॥

॥ चौपाई ॥

अहो शिष्य तैं प्रश्न जुकीनै । तिनके ये मैं उत्तर दीनै
कहै जुतैं तरुमैं द्वै पच्छी । इक भोगै इक आहि अनिच्छी ॥
ते चेतन आभास लखाये । नभ छाया ज्यूं भिन्न बताये ॥
कह्यो भिन्न कर्मी फलदाता । मति माया छाया सो ताता ॥
जीव ईस मैं चेतन रूपं । भेद गंधतै रहित अनूपं ॥ यातैं
अहंब्रह्म यह जानौ । अहं सब्द कूटस्थ पिछानौ ॥९५॥

ब्रह्म सब्द को अर्थ सुभाख्यो। महाकास सम लच्छयजु राख्यो ॥ अहं ब्रह्म नहि जौलौं जानै। तौलौं दीन दुखित भय मानै ॥९६॥

॥ तत्त्वद्रष्टिरुवाच दोहा ॥

कहो गुरु व्है कौन कूं, अहं ब्रह्म यह ज्ञान ॥ नहिं जानूं मैं आपके, भाखै बिना सुजान ॥९७॥

॥ श्री गुरुरुवाच ॥ सोरठा ॥

कहूँ अवस्था सात, सुन सिष्य व आभासकी ॥ नहिं चेतन की तात, तिनही मैं यह ज्ञान हैं ९८॥

॥ चौपाई ॥

इक अज्ञान आवरन जानौ। भ्रांति द्विविध पुनि ज्ञान पिछानौ ॥ सोकनास अतिहर्ष अपारा। अष्ट अवस्था इम निर्धारा ॥९९॥

॥ दोहा ॥

नहिं जानूं मैं ब्रह्म कूं, याकू कहत अज्ञान ॥ ब्रह्म हैय न नहिं भान व्है, यह आवरन ॥ सुजान जन्म मरन गमनागमन, पुन्य पाप सुख खेद ॥ निज स्वरूप मैं मान व्है भ्रांति बखानि बेद ॥१०१॥

द्वै विधज्ञान बखानिये, ईक परोछ अपरोछ ॥ अस्तिब्रह्म

परोछ है, अहंब्रह्म अपरोछ ॥१०२॥
नहिं ब्रह्म या अंस को अरै, परोछ विनास ॥ सकल अविद्या जालकूं दूजो नसे प्रकास ॥१०३॥
जन्म मरन मोमैं नहीं, नहिं सुख दुख को लेश ॥ किंतु अजन्य कूटस्थ मैं भ्रांतिनास यह वेस ॥१०४॥
संसय रहित स्वरूप को होइ जु अद्वय ज्ञान ॥ तब उपजै हिय मोद तब, सो तूं हर्ष पिछान ॥१०५॥
कही अवस्था सात में, तोकूं शिष्य सुजान ॥ सो सगरी आभास की, है तिनही मैं ज्ञान ॥१०६॥
ज्ञान होत है कौनकूं, यह पूछी तैं वार मैं ताको उत्तर कह्यो चहै सु पूछ बतात ॥१०७॥
भगवन हैं आभास कूं अहंब्रह्म यह ज्ञान तुम भाख्यो सो लख्यो, पुनि संका इक आन ॥१०८॥

॥ चौपाई ॥

है आभास ब्रह्मतैं न्यारा। अस तुम पूर्व कियो निर्धारा ॥ अहं ब्रह्म सो कैसै जानै ॥ आपहि भिन्न ब्रह्मतै मानै ॥१०९॥
जो जानै तौ मिथ्या ज्ञाना । होइ जेवरी भुजंग समाना ॥ श्री गुरु यह संदेह मिटाऊ । युक्ति सहित निजउक्ति सुनाऊ ॥११०॥

॥ दोहा ॥

अहं सब्द के कर्थको, सुन अब सिष्य विवेक । तव हिय के जासु नसै, संक कलंक अनेक ॥१११॥

व्है यद्यपि आभास मैं, अहं ब्रह्म यह ज्ञान ॥ तथापि सो कूटस्थ को, लहै आप अभिमान ॥ ताको सदा अभेद है विधुचेतनतै तात । बाध समै निज रूपहु, ब्रह्मरूपदरसात ११३

॥ तत्त्वदृष्टिरुवाच ॥

अहँ वृत मैं मान व्है, साछी अरु आभास । सो क्रम तैं वाक्रमविना, याको करहु प्रकाश ॥११४॥

॥ श्री गुरुरुवाच ॥

सावधान व्है सिष्य सुन, भाखूं उत्तर सार ॥ सुनत नसै अज्ञानतम, बोधभानु उजियार ११५॥

एक समय हीं भान व्है, साछी अरु आभास ॥ दूजो चेतन को विषय, साछी स्वयं प्रकाश ॥११६॥

॥ तत्त्वदृष्टिरुवाच ॥

इंद्रिय संबंध विन, "अहं ब्रह्म" यह ज्ञान ॥ कैसै व्है प्रत्यच्छ प्रभु, मोकूं कहो बखान ॥

॥ श्री गुरुरुवाच ॥

इंद्रिय विन प्रत्यच्छ नहिं, सिषय यह नियम न जान

॥ बिन इंद्रिय प्रत्यच्छ व्है, जैसैं सुख दुःख ज्ञान ॥११८

॥ दोहा ॥

गुरु को अस उपदेस सुनि, तत्वदृष्टि बुधिमंत ॥ ब्रह्म रूप लखि आतमा, कियो भेद भ्रम अन्त ॥११६॥
"अहं ब्रह्म,, या वृत्ति में निरावरन व्है भान ॥ दादू आदू रूप सभे, यं हम लियो पिछान ॥१२०॥

॥ महादेव स्तोत्र ॥

अथा परं सर्व पुराणगुह्यँनिःशेषपापौघ हरं पवित्रम् ।
जय प्रदं सर्व विपत्प्रमोचनं बक्ष्यामि शैवं महिमं हिताय ते ॥
ओं नमो भगवते सदा शिवाय सकल तत्वात्मकायसर्व मन्त्र
स्वरूपाय सर्वयन्त्राधिष्ठिताय सर्व तन्त्र स्वरूपाय सर्वतत्व
विदुराय ब्रह्मरुद्रावतारिणे नील कण्ठाय पार्ववती मनो
महर प्रियाय सोमसुर्याग्निलोचनायभ स्मोद्धूलितविग्रहाय
महाणि मुकुट धारणाय माणिक्यभुषण णाय सृष्टिस्थिति
प्रलयकाल रौद्रावताराय दक्षाध्वर ध्वंसकाय माहाकाल
स्वरूपाय मूलाधारैक निलयाय तत्वातीताय गंगाधराय
सर्व देवाधिदेवाय षडाश्रयाय वेदान्त सार त्रिवर्गसाधनाय
अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड नायकाय अनन्त वासुकी तक्षक
कर्कोटक शंख कुलिक पद्म महापद्म इत्यष्टमाहानागकुल
भूषणाय प्रणव स्वरूपाय चिदाकाशाय आकाशादिक
स्वरूपाय ग्रह नक्षत्र मालिने सकलायकलंक रहिताय सकल
लौकैककर्त्रे सकल लौकैक संहर्त्रे सकललौकैकगुरवे
सकल लौकैक साक्षिणे सकलनिगम गुह्याय सकल वेदान्त
पारगाय सकललौकैक वर प्रदाय सकललो कैकशंकराय
शशांक शेखराय शाश्वतनिजावासाय निराभासाय निरा

मयाय निर्मलाय निर्लोभाय निर्मदाय निश्चिन्ताय निरहंकाराय निरंकुशाय निष्कलंकाय निर्गुणाय निष्कामाय निरुपप्लवाय निरवद्याय निरन्तराय निष्कारणाय नरिन्तकाय निष्प्रपंचाय निःसंगाय निर्द्वंदाय निराधाराय निरागाय निष्क्रोधाय निर्भयाय निर्विकल्पाय निर्भेदाय निष्क्रियाय निस्तुल्याय निःसंशाय निरंजनाय निरूपमविभवाय नित्य शुद्धपरिपूर्णसच्चिदानंदाद्वयाय परमशांतस्वरूपाय तेजोरूपाय तेजोमयाय जयजयरुद्र महारौद्रभद्रावतार महाभैरव कालभैरव कल्पांतभैरव कपालमालाधर खट्वांग खड्ग चर्म पाशाङ्कुश डमरू शूल चाप बाण गदा शक्ति भिंडिपाल तोमर मूसल मुद्गर पाश परिघ भुशुंडी शतघ्नी चक्राद्यायुधभीषणकर सहस्रमुख दँष्ट्राकरालवदन विकटाट्टहास विस्फारित ब्रह्मांडमण्डल नागेंद्रहार नागेंद्रवलय नागेन्द्रचर्मधर मृत्युंजय त्र्यंबक त्रिपुरांतक विश्वरूप विरूपाक्ष विश्वेश्वर वृषवाहन विश्वतोमुख सर्वतोरक्षरक्षमां ज्वल ज्वल ममाभयं कुरु कुरु स्वाहाः ओं क्रौंशिवमहाकाल त्र्यंबक त्रिपुरान्तक सदाशिवनमस्ते नमस्ते ओं क्रौंशिवमहाकालार्पणमस्तु ॥

ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

निवेदक ।

प्रिय पाठक गण ! आप की सेवा में यह बड़े २ महात्माओं के गम्भीर अनुभवद्वारा लिखित उत्तम शब्दों का तथा दोहे, चौपाई, वेदमन्त्र और विचार सागर का कुछ भाग समर्पित किया जाता है । आशा है आप लोग इन शब्दों का नित्य प्रति पाठ करके अपना लोक और परलोक दोनों सुधारेंगे । इस पुस्तक के छपवाने में जो धन व्यय हुवा है वह मेरी भग्नी श्रीमती चम्पादेवी की ओर से किया गया है । यह पुस्तकें अब तक कृष्णलाल बजाज जींद, श्रीमती रानी निहालदेवी धर्म पत्नी राव बहादुर बलवीरसिंह जी, श्रीमती रानी नारायणीदेवी धर्म पत्नी सर शादीलाल चीफ जस्टिस, लाला रामजीदास ला० श्रीराम, पं० श्रीराम, डा० रघुनाथ, डा० राम नाथ जी मा० आशास्वरूप जी आदि सज्जनों की ओर से लगभग ३०००० के बिना मूल्य ही वितरण की गई हैं जिससें लोगों को बड़ा लाभ हुवा है अब इस पुस्तक पर मूल्य रखने का प्रयोजन अर्थ संचय करना नहीं है । इस पर केवल लागत मात्र मूल्य रक्खा गया है और वह भी

इस हेतु से रक्खा है कि इस की आय से यह पुस्तक फिर भी छपती रहे। आशा है पाठक उत्साह दिखायेंगे।

निवेदक

नूनकरणदास

भिवानी।

भगवद्भक्ति आश्रम रामपुरा।

यह आश्रम रेवाड़ी जंकशन से पश्चिम दिशा में लगभग एक कोस के अन्तर पर जंगल में अति पवित्र भूमि में बना है। जल की सुविधा के लिये पांच कूप और एक तालाब है। २०० बीघा भूमि में उपयोगी वृक्ष लगाकर उपवन बनाया गया है। आश्रम से लगी हुई ५०० बीघा भूमिगौओं के चरने के लिये श्री० लेफ्टीनेन्ट राव बाहादुर राव बलवीर सिंह जी ने आश्रम को प्रदान की है। इसी भान्ति दादरी, गढ़ीबोलनी, जोड़िया खेंटावास, निखरी, नूरगढ़, खोयरी, पालम, भटिण्डा, आदि अन्य स्थानों में आश्रम को कई सज्जनों ने भूमि प्रदान की है उन में वृक्ष व जलाशय बनाये गये हैं॥

इस आश्रम में एक ब्रह्मचर्याश्रम, कन्या पाठशाला वा अछूत पाठशाला और अतिथियों व सत्संगियो के ठहरने का स्थान पुस्तकालय, प्रेस, गोशाला व औषधालय भी है।

निवेदक

भूमानन्द ब्रह्मचारी

भगवद्भक्ति आश्रम रामपुरा (रेवाड़ी)

छप गई ! छप गई !! छप गई !!!

बिना गुरु के सिद्धान्त कौमुदी

भाषा फक्किका प्रकाश प्रथम खण्ड

:o:

इस पुस्तक में सिद्धान्त कौमुदी की गूढ़ फक्किकायें मूलार्थ सहित सरल हिन्दी भाषा में विस्तार पूर्वक भाष्यादि ग्रन्थों से पण्डित प्रभाकर शास्त्री ने कठिन परिश्रम से संग्रह की हैं। यह इतनी सरलता पूर्वक लिखी गई है कि विद्यार्थी गुरू की सहायता के बिना लघु कौमुदी पढ़ कर स्वयं सिद्धांत कौमुदी पढ़ सकता है अधिक क्या कोई पदार्थ ऐसा नहीं है जो उन्होंने इस में छोड़ा हो। अतः विद्यार्थी गणों को इस से लाभ उठाना चाहिये। यदि विद्यार्थीगण इस में रुचि दिखा येंगे तो शीघ्र ही हम इस के आगे के संस्करण निकालने का आयोजन करेंगे। १५० पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य ॥) पचास से अधिक लेने पर २०) सैंकड़ा कमीशन दिया जायगा।

२ शब्द सदाचार संग्रह।

इस में कबीर, सूरदास, गोरखनाथ, मीराँ बाई आदि अनेक महात्माओं की वाणियों का संग्रह है। इसके अतिरिक्त मनुष्य जीवनोपयोगी उत्तम उपदेशों का भी संग्रह है मूल्य ।=)

३ वेदोपनिषद् ।

इस पुस्तक में प्रथम ईश, कठ, केन, मुण्डक और माण्डूक्य उपनिषद् मूल और अर्थ सहित हैं। इस के पश्चात् चारों वेदों से स्तुति, प्रार्थना, उपदेश आदि के मन्त्रों का संग्रह अर्थ सहित है। १६० पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य केवल ।–)

४ ज्ञान धर्मोपदेश ।

इस छोटी सी पुस्तक में वेद शास्त्र धर्म का सार संग्रहीत है। प्रथम वेद के उत्तम मन्त्र अर्थ सहित हैं फिर वेदान्त, ज्ञान, तथा धर्म के लेख और उत्तम कविताओं का संग्रह है मूल्य –)॥। इस के अतिरिक्त भक्ति ज्ञानयोग संग्रह शब्द संग्रह डाक व्यय भेजने पर भेजी जा सकती हैं।

नोट:—

जिन सज्जनों का इन पुस्तकों की एक दो प्रतियां मंगवानी हों वह मूल्य और डाक व्यय की टिकट भेज कर मंगा सकते हैं। अन्यथा वी० पी० द्वारा खर्चा अधिक लगेगा।

सूचना ।

आश्रम में प्रेस भी जारी कर दिया गया है। यहां पर बहुत सस्ती, सुन्दर तथा समय पर पुस्तकें छापी जाती हैं।

मैनेजर

भक्ति प्रेस भगवद्भक्ति आश्रम

रामपुरा (रेवाड़ी)

पुस्तक मिलने का पता:-

१. श्री भगवद्भक्ति आश्रम रामपुरा
रेवाड़ी ।

२. रामजस मल श्योप्रसाद कोठकपूरा ।

मुद्रकः-भूमानन्द ब्रह्मचारी "भक्ति प्रेस" भगवद्भक्ति
आश्रम रामपुरा (रेवाड़ी)